चन्दामामा
माँ-बच्चों का मासिक पत्र
50
8

Photo by Premkumar Kapoor

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

पहले लिख पढ़ लें

प्रेषक :
मुरलीधर अग्रवाल, गंज बसौदा

चन्दामामा

दिसम्बर १९५७

विषय - सूची

दर्द से शीघ्र और
चैन के साथ
राहत

थोड़ा लगाने पर भी
समूल दर्द विनाशक
अमृतांजन
भयंकर वेदना और दर्द
से शीघ्र राहत देता है ।

अमृतांजन

अमृतांजन लिमिटेड,
मद्रास-४.
बम्बई-१, कलकत्ता-७.

AL. 57. 3A. HIN.

यह फोटोग्राफ ए. एल. सैयद द्वारा गेवापान ३३ पर लिया गया है।

घुमक्कड़ दार्शनिक

अपने माल पर मुनाफ़े की आशा करता, यह व्यापारी खुशी खुशी हिमालय पार करके आता है। यह चित्र ऐसा है, जो निश्चिन्त सुख की कहानी बताता है। जरा सोचिये आप कितने आनन्दित होंगे, जब आप अपने चित्र गेवर्ट फिल्म पर लेंगे। वे आपको सुखद स्मृतियों को जागृत करेंगी। बाह्य, और अन्दरूनी चित्रों के लिए गेवापान ३३ या गेवापान ३६ आदर्श रूपेण उत्तम हैं। अच्छे कलर प्रिन्ट के लिए, व परिवर्धन के लिए गेवाकलर नेगेटिव फिल्म (N. 5) इस्तेमाल कीजिये। कहने की ज़रूरत नहीं, पूर्ण सन्तोष के लिए, आपके ब्लेक एन्ड व्हाइट या कलर चित्र गेवार्ट पेपर पर ही छापे जाएं।

ALLIED PHOTOGRAPHICS PRIVATE LIMITED

अलाइड फ़ोटोग्राफ़िक्स प्राइवेट लि० कस्तूरी बिल्डिंग, जमशेदजी ताता रोड, बम्बई-१

स्नो
और
पाउडर

वीर
मुन्नू
और
गप्पी
चुन्नू

अगर तुम कहते हो तो सच नहीं होगा!
नहीं, सुबह चार बजे का सपना ज़रूर सच होता है!

मैं ने सपने में देखा कि हम दोनों ने विलायती टोपी सा एक हवाई जहाज़ देखा!..

..हम अंदर गये तो वहाँ छः हाथों वाले लोग थे जो दो हाथों पर चलते थे...

फ़ौरन ही हवाई जहाज़ फुर्रर्रर से आकाश में उड़ गया!

हम मंगल लोक में आ कर उतरे और वहाँ के लोग हमें वहाँ के राजा के पास ले गये।

हम को देखते ही राजा बोल उठा:
देखो, मंगल लोक में हमारे सामने कोई सीधा खड़ा रहेगा तो सज़ा पायेगा!

मैं तो हाथ के बल खड़ा हो गया पर तुम धड़ाम से गिर गये···और सपना टूट गया!

यह बात है तो अब खड़े होकर देख लो!
मैं तैयार हूं!

मुन्नू तो आराम से खड़ा हो गया पर पुन्नू को पीठ के बल गिरते देर नहीं लगी

पुन्नू, झूठी बहादुरी किसी काम की नहीं। कसरत करो, दूध पियो और डालडा से बना खाना खा कर ताक़त हासिल करो!
डालडा वनस्पति बच्चों को और सब को ताक़त देता है। इस में विटामिन ए और डी मिले हैं जो शरीर को तंदुरुस्त रखते हैं।
डालडा से बना खाना आसानी से पचता है।

हम प्रत्येक व्यक्ति और व्यापारिक संस्था को आश्वासन देना चाहते हैं कि कलात्मक सृजन, स्पष्टतम कार्य-निपुणता, आकर्षक मुद्रण और शीघ्र वितरण हमारा ध्येय है।
★
हिन्दी, अंग्रेजी, तेलुगु, तमिल, कन्नड़, मराठी, गुजराती, मलयालम और उड़िया में छपाई का कार्य लिया जाता है।
★
दि बी. एन. के. प्रेस
(प्राइवेट) लिमिटेड
चन्दामामा बिल्डिंग्स :: मद्रास-२६
टेलिफ़ोन :
८८८५१-३ लाइन्स

अधिक खतरनाक बीमारी होनेके पहले ही बच्चे के सर्दी-जुकाम को दूर कीजिये

रातोंरात इस गुणकारी प्रसिद्ध औषधि द्वारा-उसके गले, नाक व छाती के दर्द का अन्त कीजिये।

जब भी बच्चे को सर्दी-जुकाम हो जाय तब ज़रा भी देर न कीजिये . . . , सोते समय उस की छाती, गले व पीठ पर विक्स-वेपोरब मल दीजिये। बच्चा, सर्दी जुकाम की तकलीफों से जहाँ दर्द हो रहा है, आराम पायेगा और रात ही रातमें, जब आपका बच्चा सुख की नींद सोयेगा, विक्स वेपोरब उसे सर्दी-जुकाम से छुटकारा दिलायेगा। सुबह होने तक बच्चा स्वस्थ हो जायगा।

२ तरह से आराम पहुंचाता है

१ यह नाक के ज़रिए असर करता है

विक्स वेपोरब की तेज औषधीय भाप सूंघने से आपके बच्चे के नाक व गले के सर्दी-जुकाम के विकार मिट जाते हैं।

२ यह त्वचा के ज़रिए असर करता है

आपके बच्चे की छाती में दर्द भी नहीं रहता क्योंकि विक्स वेपोरब त्वचा के जरिए पुलटिस जैसी गर्मी पहुंचाता है।

छाती, गले व पीठ पर मलिये।

आज ही विक्स वेपोरब का इस्तेमाल कीजिये।

नयी कम कीमत डिबीया की कीमत सिर्फ ४० नये पैसे + टॅक्स

चाय के साथ पार्ले
मोनाको साल्टेड स्नेक जैसे
पौष्टिक पदार्थों को चुनने के लिए इनकी सुन्दर
अभिरुचि ही इनको प्रेरित करती है। ये
करारे, हल्के पार्ले बिस्कुट उनके शारीरिक
सौष्ठव को बनाये रखते हैं।

पार्ले के

मोनाको

खारे बिस्कुट

भारत के सर्वप्रथम व
सर्वोत्तम खारे बिस्कुट

पार्ले प्रोडक्ट्स मेनुफेक्चरिंग कम्पनी प्राइवेट लिमिटेड, बम्बई
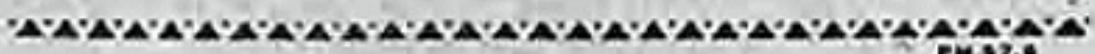
PM.57.6

चन्दामामा

संचालक : चक्रपाणी

प्रति व्यक्ति के अपने अपने कर्तव्य होते हैं। कुछ कर्तव्य यदि पारिवारिक हैं...तो कुछ सामाजिक, कुछ वैय्यक्तिक। ये कर्तव्य ही समाज के नैतिक आधार हैं....इन्ही के आधार पर समाज के नैतिक मापदण्ड बनते हैं।

वैय्यक्तिक कर्तव्यों के न करने पर परिवार में खलबली होती है—और पारिवारिक जिम्मेवारियों के न निभाने पर समाज में गड़बडी पैदा हो जाती है।

इस मास की जातक कथा...."अराजकता" इसी तथ्य का निरुपण करती है। जब एक राजा कर्तव्य के पथ से हटता है तो वह निरंकुश हो जाता है...और निरंकुश राजा प्रजा का पिता नहीं, शत्रु है।

वर्ष : ९ दिसम्बर १९५७ अंक : ४

मुख-चित्र

पाण्डवों के अज्ञातवास का भेद यदि खुलजाता तो उनको फिर बारह वर्ष, अरण्यबास और फिर एक बर्ष का अज्ञातवास करना पडता। इसलिए दुर्योधन जगह जगह अपने दूत भेजकर उनके ठिकाने के बारे में मालूम करने की कोशिश कर रहा था। वे नगर, पर्वत, अरण्य सभी जगह घूम आये पर पाण्डवों का पता न लगा सके।

दुर्योधन ने तुरत भीष्म, द्रोण आदि, को बुलवाया, उनसे भविष्य की कार्यवाही के विषय में सलाह मशवरा किया। कई ने कहा कि पाण्डव मर गये होंगे। केवल कृष्णाचार्य ने कहा—"हम हर देश पर आक्रमण करें। बलहीन हमसे सन्धि कर ही लेंगे। और वह देश, जहाँ पाण्डवों को आश्रय मिला होगा उनके शौर्य-बल के बूते पर जरूर युद्ध के लिए तैयार होगा। पाण्डव युद्ध में भाग लेंगे और इस तरह वे हमारे हाथ में आ जायेंगे।"

इस पर सुशर्मा ने कहा—"अपने साले कीचक के बल पर, विराट राजा ने कई बार आक्रमण किया और कई बार मुझे परास्त किया। अब चूँकि कीचक की गन्धर्वों ने हत्या कर दी है, इसलिए हम आसानी से विराट पर आक्रमण करके उसे जीत सकते हैं। मैं विराट राजा से अपना बदला लूँगा।"

दुर्योधन ने अपनी सेना को दो भागों में बाँट दिया। एक भाग को सुशर्मा को देकर, उसे मत्स्यदेश पर आक्रमण करने के लिए कहा।

सप्तमी के दिन, सुशर्मा ने मत्स्यदेश पर आक्रमण कर, विराट के पशु गण को अपने आधीन कर लिया।

यह मालूम होते ही विराट युद्ध के लिए निकला। उसके साथ, सिवाय बृहन्नला के सब पाण्डव गये। इस युद्ध में विराट को परास्त कर सुशर्मा ने पकड़ लिया। यह देख धर्मराज ने भीम को, सुशर्मा के विरुद्ध लड़ने के लिए भेजा। भीम ने न केवल सुशर्मा को पराजित किया और विराट को छुड़ाया ही, अपितु भागते हुए सुशर्मा को कैद भी कर लिया।

अराजकता

ब्रह्मदत्त काशी का राजा था। और पांचाल कोपिल्य नगर का राजा था। यह उत्तर पांचाल देश की राजधानी थी। वह दुराचारी और विलासी हो गया था और शासन सम्बन्धी बातों में कुछ भी दिलचस्पी नहीं दिखाता था। कहा जाता है, यथा राजा तथा प्रजा। इसलिए मन्त्री भी राजा की तरह अन्याय करने लगे। प्रजा पर अधिक कर थोपे गये। दिन प्रति दिन राज्य में अराजकता बढ़ती गई।

प्रजा को चैन न थी। दिन में राजा के सिपाही तंग करते और रात में चोर। इसलिए लोगों ने अपने घरों में ताले लगा दिये, दरवाज़ों के सामने काँटों की झाड़ियाँ रख दीं—अपने पत्नी, बाल-बच्चों को लेकर, जंगल में जाकर, रहने लगे। वे दिन भर जंगल में रहते और आधी रात के करीब अपने घर जाते।

इसी समय बोधिसत्व, शहर के बाहर, एक पेड़ के आराध्य देवता के रूप में पैदा हुए। राजा प्रति वर्ष उसकी पूजा करवाता, उसके पास मेले लगवाता और बहुत-सा रुपया खर्च करता।

"यह राजा, जो मेरी इतनी भक्ति से पूजा कर रहा है अविवेक के कारण अपने राज्य में, अराजकता का कारण बना हुआ है। इसको सद्मार्ग पर सिवाय मेरे और कोई नहीं ला सकता।" देवता ने सोचा।

तुरत जहाँ राजा सो रहा था, वह वहाँ जाकर प्रत्यक्ष हुआ। एक देदीप्यमान प्रकाश को साक्षात् अपने सामने देख राजा ने पूछा—"देव! आप कौन हैं?

"राजा! मैं देवता हूँ। मैं तुझे उपदेश देने आया हूँ।" देवता ने कहा।

"क्या है यह उपदेश?" राजा ने पूछा।

"राजा! तुम बिना सावधानी व ध्यान के राज्य पालन कर रहे हो। इसलिए तुम्हारे राज्य का विनाश हो रहा है। जो राजा बिना न्याय के शासन करता है वह मरने के बाद नरक जाता है। राजा को बिगड़ा देखकर और भी बिगड़ जाते हैं। इसलिए राजा को हमेशा सन्मार्ग पर ही चलना चाहिए।" देवता ने कहा।

"देव! अब मुझे क्या करना चाहिये?" राजा ने पूछा।

"राज्य का काम कम से कम अब तुम अपने आप देखो। अराजकता हटाओ और राज्य की रक्षा करो।" देवता यह कहकर अदृश्य हो गया।

राजा को अक्ल आ गई। उसने यह जानने का निश्चय किया कि उसके राज्य की क्या हालत थी। अगले दिन उसने अपने मन्त्रियों को बुलाया, उनको राज्य-कार्य सौंप कर, पुरोहित को साथ लेकर, वे निरीक्षण के लिए निकल पड़े।

नगर के बाहर, उन्हें एक बूढ़ा दिखाई दिया। वह घर में ताला लगाकर, घर के चारों ओर काँटों की झाड़ियाँ डालकर, जंगल में बाल-बच्चों को लेकर भाग गया था। शाम

को, अब घर वापिस आकर, वह अपने घर का दरवाज़ा खोल रहा था तो उसके पाँव में काँटा चुभ गया। तुरत वह पाँव पकड़कर, कराहता कराहता बैठ गया। काँटा निकालते हुए उसने कहा—"जैसे मेरे पाँव में काँटा चुभा है, वैसे ही युद्ध में, पांचाल राजा को बाण लगे!" वह यों राजा को कोस रहा था।

यह राज-पुरोहित ने सुन लिया। उसने बूढ़े के पास जाकर कहा—"आप बूढ़े हैं। आपकी आँखें कमज़ोर हैं, ठीक दिखा नहीं होगा, इसलिए काँटा चुभ गया। इसमें राजा का क्या कसूर है!"

"राजा क्योंकि अन्यायी है, इसीलिए राज कर्मचारी दुष्ट हो गये हैं। दिन में सिपाही तंग करते हैं और रात में चोर। इसलिए लोग घरों में ताले लगाकर, घर के चारों ओर काँटे डालकर, बाल-बच्चों को लेकर, जंगल में भाग रहे हैं। नहीं तो भला मेरे पाँव में यह काँटा क्यों चुभता!" बूढ़े ने कहा।

राजा ने अपने पुरोहित के कान में कहा—"इस बूढ़े की बात सच है। आओ, हम नगर वापिस चलें और राज्य का परिपालन ठीक तरह करें।"

"प्रभु! आप जल्दी न कीजिये!" यह कहकर पुरोहित, राजा को एक और ग्राम में ले गया। वहाँ उनको एक स्त्री दिखाई दी। उसकी दो लड़कियाँ थीं, जो सयानी हो चुकी थीं, पर क्वांरी ही थीं, वह उन्हें जंगल में ले नहीं जा सकती थी। उसने उनको घर में ही रखा और स्वयं उनके लिए लकड़ी, पत्ते और चीज़ें लाकर देती। वह पत्तों के लिए एक पेड़ पर चढ़ी और नीचे गिर गई। वह राजा को दुत्कार रही थी—"इस राजा के जीते जी लड़कियों की शादियाँ भी नहीं होंगी....!"

यह सुन, पुरोहित ने उसके पास आकर पूछा—"अरे, पगली! क्या राजा का यही काम है कि सब क्वांरी लड़कियों के लिए वर ढूँढता फिरे!"

"अराजकता बढ़ गई है। दिन में सिपाहियों का डर है, रात में चोरों का। लड़कियों को वर कैसे मिल सकते हैं!" उस स्त्री ने कहा।

राजा और पुरोहित वहाँ से आगे गये। उन्हें एक खेत में, एक किसान हल जोतता हुआ दिखाई दिया। वह हल जोत रहा था कि एक बैल, हल

के डंडे से टकरा कर नीचे गिर गया। "इस पांचाल राजा के हृदय में भाला क्यों नहीं फँस जाता और वह क्यों नहीं इस प्रकार गिर जाता! हम लोगों की मुसीबतें टलेंगी!"

पुरोहित ने किसान से पूछा—"तुम्हारी बेपरवाही के कारण बैल गिर गया। इसमें राजा का क्या दोष है?"

"राजा का दोष नहीं है तो और किसका है! अगर शासक दुष्ट हो तो गरीब कैसे जियेंगे! दिन में सिपाहियों का डर, रात में चोरों का। घरवाली जो खाना बनाकर लाई थी दुष्टों ने उसे खा लिया। मैं यह सोच रहा था कि वह फिर कब खाना लायेगी कि इतने में बैल को चोट लगी और वह नीचे गिर गया।" किसान ने कहा।

उस दिन वे दोनों एक ग्राम में रहे। अगले दिन सवेरे उनको एक ग्वाला दिखाई दिया। वह दूध दुह रहा था कि गौ ने लात मारी। ग्वाले को चोट लगी। उसने कहा—"अगर इस पांचाल राजा को भी युद्ध में तलवार की चोट लगे तो अच्छा हो!"

"अगर तेरी गौ लात मारे तो वह भी राजा का कसूर है!" पुरोहित ने पूछा।

"क्यों नहीं! अगर कर्मचारी दुराचारी हों तो दुर्बल कैसे जियेंगे! जो गौवें दूध देती थीं, वे पकड़ ले गये और जिन गौवों को कभी न दुहा गया हो उनको दुहा गया तो वे लात नहीं मारेंगी तो क्या करेंगी!" ग्वाले ने कहा।

वहाँ से पुरोहित और राजा राजधानी की ओर चले। रास्ते में उन्हें एक दृश्य दिखाई दिया। कीचड़ में जिन्दे मेंढ़कों को कुरेद कुरेद कर कौवे खा रहे थे।

एक मेंढक ने गुस्से में कहा—"ये कौवे जैसे हमें खा रहे हैं, वैसे शत्रु, पांचाल देश के राजा को और उसकी सन्तान को नोंच नोंच कर खाये!"

"अरे मेंढक! खानेवाले कौवे को तो कुछ कह न सके, विचारे राजा को ही शाप देने लगे!" पुरोहित ने कहा।

"राजा को सन्तुष्ट करने के लिए पुरोहित इसी तरह पूछता है। इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं। क्योंकि देश में, कौओं को खाने की कमी है, इसीलिए तो वे जिन्दे मेंढकों को खा रहे हैं। इस तरह के देश का राजा मर जाये तो क्या अच्छा हो!" मेंढक ने कहा।

यह सुन राजा ने सोचा कि अब मुझे मेंढक भी शाप दे रहे हैं। अब कोई फायदा नहीं। राजधानी जाकर हमें यह अराजकता खतम ही करनी होगी।

उसने राज्य शासन में दिलचस्पी दिखाई। गल्तियाँ ठीक कीं और इस तरह शासन किया कि लोग शान्ति और सुखपूर्वक रहने लगे।

[११]

[पिंगल ने माँ से जान लिया कि उसके भाइयों ने उसको कैसे सताया था। परन्तु जब भाई रोने का ढोंग करके आये तो उसमें सहज भ्रातृ प्रेम उमड़ आया। उसने उनको अपने घर में निमन्त्रित किया। वे पिंगल के लाये हुए धन को हड़पने के लिए, पिंगल को एक जहाज के कप्तान को बेचने की साजिश करने लगे। उसके बाद....]

कप्तान ने जो कुछ जीवदत्त को कहना था, वह सब सुना। फिर वह हाथ फैला कर जोर से हँसा। जीवदत्त व लक्षदत्त उस अट्टहास का अर्थ न समझ सके। वे एक दूसरे का मुँह ताकने लगे।

कप्तान थोड़ी देर तक कुछ सोचता रहा। उसने फिर जीवदत्त की आखों से आखें मिलाते हुए पूछा—"जो तुम कह रहे हो क्या वह सब सच है! क्या सच मुच तुम्हारा भाई पिंगल तुम्हें और तुम्हारी माँ को सता रहा है! मेरे सामने झूटी बातें नहीं चलती, समझे!"

"हाँ, सच है, कप्तान साहब, बिल्कुल सच। मेरे भाई ने तिल भर भी झूट नहीं कहा है! हम इतने दिनों से अपने भाई के कारण जो कष्ट झेल रहे हैं वे भगवान ही जानते हैं!" लक्षदत्त ने जोर देकर कहा।

कप्तान ने दोनों भाइयों को गौर से देखा। सिर हिलाते हुए उसने कहा—"अगर यह बात है तो मुझे तुम्हारे भाई को खरीदने में कोई एतराज नही है। मैं उसे दो-तीन साल जहाज पर काम दूँगा। तब उसकी अक्ल दुरुस्त हो जायेगी। उसके बाद मैं उसको फिर घर वापिस भेज दूँगा। क्यों, ठीक है न! तुम्हारा भी इसी में फायदा है।"

"कप्तान साहब! आपका भला हो। वह काम आप न कीजिये।" जीवदत्त गिड़गिड़ाया।" "यूँ ही वह बड़ा दुष्ट है। अगर आपने दो तीन साल जहाज पर रख कर घर भेजा तो जरूर वह हमारी, और हमारी माँ की जान निकाल कर रहेगा। वह बदला लेता है तो साँप की तरह लेता है। हम उसे अच्छी तरह जानते हैं।" उसने कहा।

"अगर यह बात है तो क्या उसे मुझे गुलाम के रूप में बेचने के लिए तुम्हारी माँ भी मानती है! बाद में जाकर राजा से शिकायत करने से फायदा नहीं! सोच समझकर बताओ।" कप्तान ने ऊँची आवाज में कहा।

जीवदत्त और लक्षदत्त ने कानों मे कुछ बातचीत की। फिर अति विनय से जीवदत्त ने इस प्रकार कहा :—

"हुजूर, कप्तान साहब। हम सब बातें माँ से करके ही आये हैं। वे भी चाहती हैं कि जैसे तैसे उसको घर से बाहर भेज दिया जाय! भले ही लड़का हो पर वह उसका सताना नहीं सह सकती है। परन्तु इतना सब होते हुए भी वह अपने आप आपको अपना लड़का न बेच सकी। इसीलिए हम दोनों आये हैं।"

"अगर यह बात है तो आप शाम को, सूर्यास्त के समय, किसी न किसी बहाने उसको समुद्र के किनारे ले आना। बाद में जो कुछ करना होगा मैं कर दूँगा—यह लो दाम, जो इसकेलिए मैंने देने का इरादा किया है।" कप्तान ने सौ मुहरें जीवदत्त को देनी चाहीं।

जीवदत्त ने, बिना मुहरें लिए कहा—"हुजूर, उसको समुद्र के किनारे तक लाना हमारे बस की बात नहीं है। उसमें सौ लोमड़ियों की चालाकी है और अस्सी हाथियों की ताकत है। इसलिए आप आज रात को हमारे घर आइये और उसको पकड़कर ले जाइये।"

जीवदत्त का भय देखकर कप्तान जोर से हँसा। "उसकी चालबाजी मेरे सामने नहीं चल सकती। अगर राक्षस भी हाथ में आया तो उसके हाथ पैर जँजीरों से बाँधकर, मैं उससे जहाज में काम करवाऊँगा। अच्छा, मैं दो आदमियों को साथ लेकर ठीक समय पर तुम्हारे घर आऊँगा। तुम दोनों तैयार रहना।"

"हम आपकी सहायता के लिए बड़े आभारी हैं।" जीवदत्त ने और लक्षदत्त ने कहा। उन्होंने कप्तान की दी हुयी मुहरें लेलीं। उसे घर का पता बता दिया। और वे खुशी में सुध बुध भूलकर घर की ओर चले।

"अब हमें कुछ ऐसा काम करना चाहिये ताकि पिंगल को सन्देह न हो। कप्तान अगर दो आदमियों को साथ लेकर आया तो उसे ज़रूर सन्देह हो सकता है।" लक्षदत्त ने कहा।

"आह....इसका कोई डर नहीं है। इसकेलिए मैंने पहिले ही एक चाल सोच ली है।" कहते हुए जीवदत्त ने चारों

ओर सिर घुमाकर देखा। उसने लक्षदत्त के कान में कुछ कहा।

लक्षदत्त ने जोर से हँसते हुए, ताली पीटते हुए, कूदते फाँदते हुए कहा— "भैय्या, मैं जानता हूँ, तुम बृहस्पति से भी अधिक अक्लमन्द हो। जब पिंगल का लाया हुआ धन हमारा हो जाएगा तो बँटवारे में तो कोई अन्याय नहीं करोगे?"

"अन्याय! देखते देखते भला भाई को कैसे धोखा दूँगा! ऐसी बात तो कभी हमारे वंश में ही नहीं हुयी।" जीवदत्त ने कहा।

दोनों भाई हँसते हँसाते, सीटी बजाते चले। जब घर के पास आये तो उन्हें पिंगल बाहर बैठा दिखाई दिया। उन्होने झट रोनी-सी शक्ल बनाली। उसके पास गये। पिंगल ने उनकी शक्ल देख कर कहा—"भाइयो, क्यों आप इतने दुखी हैं? क्या हो गया? क्या मैं आपकी मदद कर सकता हूँ?"

जीवदत्त ने रुँधी हुयी आवाज में कहा— "और कुछ नहीं भाई! आज हम आ रहे थे कि रास्ते में हमें हमारा एक पुराना दोस्त जहाज का कप्तान मिला। वह इस

शहर में किसी व्यापार पर आया हुआ है। उसने कभी हमारी बड़ी आवभगत की थी, आतिथ्य किया था। परन्तु आजतक हमने उसको अपने घर दावत न दी, हम गरीब जो हैं। इसका हमें बड़ा अफ़सोस हो रहा है!"

"भैय्या, क्या आपका दोस्त मेरा दोस्त नहीं है! अब तो हम कोई गरीब नहीं हैं। अगर हम चाहें तो अवन्तीपुर के हर आदमी को रोज दावत दे सकते हैं। आप अपने दोस्त, जहाज के कप्तान को अपने नौकर-चाकर, मित्रों के साथ भोजन के लिए बुलाइये।" पिंगल ने उत्साह के साथ कहा।

"क्यों, सच है भैय्या!" जीवदत्त और लक्षदत्त ने इस खुशी से पूछा जैसे दुनियाँ में उनसे अधिक कोई खुश ही न हो।

"हाँ, सच है। आप अपने दोस्त को बुलाइये। अच्छी दावत देंगे।" पिंगल ने कहा।

"अच्छा, तो यह बात हम अपने दोस्त से कह आते हैं।" यह कहकर, जीवदत्त, और लक्षदत्त फिर जल्दी जल्दी भागते भागते शहर वापिस गये।

वे दोनों सूर्यास्त तक, इधर उधर जुआ खेलते रहे, शराब पीते रहे। अन्धेरा होते ही वे जहाज के कप्तान की ठहरने की जगह गये। उसने साथ आने के लिए कहा। जहाज का कप्तान बड़ा खुश हुआ। दो हट्टे कट्टे नाविकों को साथ लेकर निकला।

पिंगल ने जहाज के कप्तान और उसके अनुचरों का हार्दिक स्वागत किया। जब वे एक कमरे में आराम से बैठ गये तो एक बड़े थैले में से तरह तरह के पकवान निकाल कर, पिंगल और उसकी माँ ने उनको परोसा। जहाज के कप्तान को थैले का रहस्य न मालूम था। उसने सोचा कि जीवदत्त और लक्षदत्त ही उसका यों आतिथ्य कर रहे थे।

रात में बहुत देर तक सब गप्पें लगाते रहे। पिंगल जब ऊँघ रहा हो तो अचानक उसको बाँधकर ले जाने की कप्तान ने सोची। परन्तु वह ऊँघता नजर न आया, वह जोश से कहानी सुना रहा था। इधर उधर की खबरें बता रहा था।

यह सोचकर कि अधिक समय व्यर्थ करना अच्छा न था। कप्तान ने जीवदत्त और लक्षदत्त को इशारा किया। वे सब फौरन पिंगल पर कूदे। उसके हाथ पैर पकड़ लिए। जीवदत्त ने उसके मुख में कपड़े ठूँस दिये ताकि वह चीखे चिल्लाये न।

पिंगल, पहिले पहल तो कुछ चौंका। फिर उसने उनकी पकड़ से अपने को छुड़ाने का पूरा प्रयत्न किया। पर वह अकेला था, और उसको बाँधने वाले पाँच। तुरत उसको, उसका सेवक भल्लूक केतु याद आया चाहे कैसा भी कष्ट हो, एक मंत्र के उच्चारण करने पर उसने तुरत आने की प्रतिज्ञा की थी। उसने पिंगल को वह मंत्र बता ही

रखा था। परन्तु उस समय बहुत कोशिश करने पर भी पिंगल को वह मंत्र याद न आया। वह विचारा अपने भाइयों की साजिश का शिकार हुआ। उसे कप्तान का गुलाम होना पड़ा।

बगल के कमरे में उसकी माँ सो रही थी। पर उसे कुछ न मालूम था। पिंगल के हाथ पैर बाँधकर उसको बेहँगी की तरह कन्धों पर लटका कर, कप्तान के पीछे उसके दोनों नौकर चले। जीवदत्त और लक्षदत्त भी उसके साथ समुद्र के किनारे तक गये। वहाँ उन्होंने जहाज के कप्तान से कहा—"आप किसी भी हालत में हमारे भाई को न छोडिये। वह नाग साँप है। यह हम आपको पहिले ही बता चुके हैं।"

"साँप का मुख बन्द कर दिया है। मैं यह भी जानता हूँ कि उसके दान्त कैसे निकाले जा सकते हैं। अगर मैंने उसको जहाज के लोहे के मस्तूल से बाँध दिया तो भगवान भी उसे न छुड़ा सकेंगे।"

जीवदत्त और लक्षदत्त बार बार कप्तान को धन्यवाद देकर घर आये। क्यों कि तब तक सवेरा न हुआ था इसलिए उन दोनों ने थोड़ी देर सोने का अभिनय

किया। सवेरा होते ही, जल्दी जल्दी माँ के पास गये और उसे उठाया—"माँ पिंगल कहाँ है?" उन्होंने घबराते हुए पूछा।

माँ ने उनकी ओर निहारा। "क्यों इस तरह घबरा रहे हो? वह कमरे में सो रहा होगा। देखो।" उसने कहा।

"वह कमरे में नहीं है। घर में और कहीं भी वह नहीं दिखाई देता।" जीवदत्त ने कहा।

यह सुन, माँ को बहुत डर लगा। वह तुरत खाट से उतरी। उसने सारा घर खोजा। उसको घबराता देख जीवदत्त ने झट कहा—

"माँ मुझे एक सन्देह हो रहा है। भाई कहीं कप्तान के साथ, जो रात हमारे यहाँ भोजन पर आये थे, समुद्र यात्रा पर तो नहीं चला गया है! यह हो सकता है।"

"शायद यही हुआ होगा। कप्तान भाई से कह रहा था कि किसी द्वीप में किलों के खन्डहर हैं और उनके तहखाने में खजाने हैं। और, पिंगल कह रहा था कि उन खजानों के ढूँढ निकालने में वह बहुत चतुर था।" लक्षदत्त ने बताया।

बिचारी माँ को इस बात में कुछ सचाई दिखाई दी। उसने हाथ जोड़कर कहा—"बेटा! पिंगल किस्मतवाला है। उसकी सद्बुद्धि और सद्व्यवहार उसको हर विपत्ति से बचायेंगे। मेरा बेटा जरूर जल्दी वापिस आयेगा।" उसने परमात्मा की प्रार्थना की।

माँ को यह करता देख दोनों दुष्ट लड़कों को बड़ा गुस्सा आया। उन्होंने माँ की ओर देखकर जोर से हँसते हुए कहा—"आनि, तुम्हारा कहने का मतलब यह कि वह अच्छा है और हम खराब हैं। हम जानते हैं, तुम शुरु से ही उसका पक्षपात करती आई हो। अब इस घर में एक क्षण नहीं रहेंगे। पिता, जो सम्पति छोड़ गये हैं, उसे खोजकर हम ले जाएँगे।" कहते हुए वे निकल पड़े।

माँ ने उनको रोकते हुए कहा—"जो कुछ तुम्हारे पिता ने कमाया था, वह तुम कभी का फूँक चुके हो। इस घर में जो कुछ है, वह सब पिंगल का अपना कमाया हुआ है।"

यह सुन दोनों भाई खौल उठे। उन्होंने माँ को बुरा भला कहा। पिंगल को जो धन, जादूवाली थैली, अस्त्र-वस्त्र, वगैरह पद्मपाद ने दिये थे, उन्होंने ढूँढ निकाले।

(अभी और है)

अजीब व्यापारी

[गतांक से आगे]

कई दिन व्यापारियों ने काफ़िले की इन्तजार की, फिर वे अपने पैसे के बारे में चिन्तित होने लगे। उन्होंने अलि के सामने अपनी चिन्ता व्यक्त भी की क्योंकि उसकी बात का यकीन करके ही उन्होंने मारूफ़ को कर्ज दिया था।

अलि ने मारूफ़ को अलग ले जाकर कहा—"तुम कतई पागल हो गये हो, व्यापारी पैसे के लिए तकाजा कर रहे हैं। सुना है, तुमने साठ हजार मुहरें ली हैं। इस धन से तो बहुत कुछ व्यापार किया जा सकता था। तुमने निरे आलसी की तरह उस धन को, भिखारियों को दे दिया। इस कर्ज को कैसे चुकाने की सोच रहे हो?" मारूफ़ को अलि ने डाँटा फटकारा।

"कोई डर नहीं है। इन साठ हजारों की भी क्या बात है! मेरा काफिला आने दो। व्यापारी चाहेंगे तो सोना दूँगा, नहीं तो माल दूँगा। जो कुछ भी चाहें मेरे पास ढेर के ढेर हैं।" मारूफ़ ने कहा।

"अरे पागल! यह कहानी मुझे ही सुना रहे हो। मैं तुम्हारी पोल खोल सकता हूँ। क्या समझ रखा है!" अलि ने कहा।

"बस करो। क्या तुमने मुझे गरीब समझ रखा है! रास्ते में बेशुमार दौलत है। मेरा काफ़िला आने दो इन व्यापारियों का धन उन्हें तुरत दे दूँगा।" मारूफ़ ने कहा।

"अरे दुष्ट! मुझसे ही क्या झूट बोलेगे! देख, क्या करता हूँ!" अलि ने डराया।

"चाहो तुम कुछ भी कहो उनको मेरे काफ़िले के आने तक इन्तजार करनी ही

श्री एम. के. मेघाणी

होगी। उसके बाद उनका पैसा उनको दे ही दूँगा।" मारूफ़ ने कहा।

इससे अलि का मुख बन्द हो गया। जिसका, कभी यह कहकर परिचय दिया था कि वह करोड़पति था, अब वह कैसे कहे कि वह कँगाल था!

बाकी व्यापारियों ने अलि के पास जाकर पूछा—"हमारे कर्ज के बारे में क्या कहते हो! क्या कुछ तय हो सकेगा कि नहीं!

अलि ने कहा—"कर्ज के बारे में उससे कहने के लिए मैं भी थोड़ा हिचकिचाया क्योंकि मैंने ही उसको एक हज़ार दीनारें उधार दे रखी हैं। यूँ तो, उसको उधार देने से पहिले आपको मुझसे कहना चाहिये था। मैं आपके कर्ज का जिम्मेवार नहीं हूँ। उसे आप ही वसूल कर लीजिये। अगर आप नहीं कर पाते हैं तो सुल्तान से शिकायत कीजिये कि उसने आपको दगा दिया है।"

व्यापारियों ने जाकर सुल्तान से मारूफ़ और उनमें, जो लेना देना हुआ था, उसके बारे में कहा। "हुजूर! हम इसे ग़रीब भी कैसे समझें, जब कि इसने हमारे सामने ही भिखारियों को मुट्ठी भर-भरके सोने की मुहरें दी हैं। ग़रीब कभी यह न करेगा। दान दक्षिणा के लिये ही उसने हमसे साठ हजार मुहरें उधार में ली थीं। और अगर यह सोचें कि वह रईस है तो बहुत दिन इन्तजार की पर उसका काफ़िला आता नजर नहीं आता।"

उनकी बातें सुनकर सुल्तान को भी विश्वास हो गया कि मारूफ़ बहुत बड़ा रईस था।

सुल्तान बड़ा लालची था। और जब उसको मालूम हुआ कि मारूफ़ ने मुट्ठी भर भर के सोना लुटाया था तो उसने भी

उससे फायदा उठाना चाहा। उसने व्यापारियों को भेज दिया। अपने वज़ीर को बुलाकर कहा—"हमें इस मारूफ़ से दोस्ती करनी चाहिये। उसका काफ़िला आज नहीं तो कल आयेगा ही। ये व्यापारी उसकी राह देख रहे हैं। इससे पहिले कि वे कुछ हड़पें हमें चौकन्ना रहना होगा। जरूरत पड़ी तो मैं अपनी लड़की की शादी भी उससे कर दूँगा। और उसकी सम्पत्ति इस तरह अपनी सम्पत्ति से मिला लूँगा।"

"हुज़ूर, आप लालच के फेर में धोखा न खायें। यह आदमी बड़ा धोखेबाज है।" वज़ीर ने कहा।

"मैं पहिले उसको परख कर देखूँगा। उसकेलिये भी मैंने तरीका सोच रखा है। अगर यह साबित हुआ कि वह धोखेबाज है तो उसका सिर कटवा दूँगा।" सुल्तान ने कहा।

तुरत वज़ीर ने मारूफ़ को बुलवाया। वह सुल्तान को सलाम करके बैठ गया।

"क्या यह सच है कि तुमने शहर के व्यापारियों से साठ हजार दीनारें कर्ज में ली हैं?" सुल्तान ने पूछा। मारूफ़ ने कहा कि सच है। "तो उनका कर्ज क्यों नहीं चुकाते?" सुल्तान ने उससे फिर पूछा।

"ज्यों ही मेरा काफ़िला आयेगा त्यों ही उनका कर्ज मैं चुका दूँगा। सोना चाहेंगे तो सोना दूँगा, माल चाहेंगे तो माल दूँगा। चाहे जो चाहें मेरे पास ढेर के ढेर हैं।" मारूफ़ ने कहा।

उसको परखने के लिये सुल्तान ने हजार दीनारों की कीमत वाली मोती उसको देते हुए पूछा—"क्या इस प्रकार के मोती आपके काफ़िले में आ रहे हैं?"

मारूफ़ ने उसे इधर उधर फेर कर देखा। आखिर उसने उसे पैर के नीचे रखकर कुचल दिया।

सुल्तान को गुस्सा आगया। "क्यों? तुम्हारा क्या इरादा है?" उसने पूछा।

"कुछ भी कीमत हो। यह मोती हजार दीनारों की नहीं है। मेरे पास इससे भी बड़ी बड़ी मोतियाँ हैं।" मारूफ़ ने कहा।

सुल्तान का लालच और भी बढ़गया। उसने शहर के व्यापारियों को बुलाकर कहा—"आपको अपने कर्ज़ के बारे में बिल्कुल फ़िक्र नहीं करनी चाहिये। काफ़िला जरूर आयेगा। तब आप अपना कर्ज़ ले सकते हैं।"

उसने फिर वज़ीर को बुलाकर कहा। "मारूफ़ को राजमहल में मेहमान बनाओ। यह भी मालूम करो कि वह कब मेरी लड़की से शादी कर सकेगा। हम उसकी सारी धन-दौलत अपने धन-दौलत में मिला सकेंगे।"

"हुज़ूर, इस परदेशी को देखकर मुझे बड़ा सन्देह हो रहा है। उसको राजमहल में बुलाकर रखना अच्छा नहीं है। अभी जल्दी ही क्या है। काफ़िला तो आने दीजिये।" वज़ीर ने सलाह दी।

यह सलाह सुनकर सुल्तान आग बबूला होगया—"विश्वासघाती कहीं का। तुम पहिले मेरी लड़की से शादी करना चाहते थे। मैं न माना। और अब उसकी अच्छी जगह शादी होने जा रही है तो तुम उसे बिगाड़ना चाहते हो और खुद उससे शादी करना चाहते हो। अगर इसकी हमारी लड़की से शादी होगई तो हम सब मालामाल हो जायेंगे। क्या तुम यह जानते हो?" सुल्तान ने कहा।

वज़ीर ने सोचा कि अगर उसने और विरोध किया तो सुल्तान को और भी गुस्सा आयेगा। वह सीधे मारूफ़ के पास गया—"सुल्तान अपनी लड़की की शादी आपसे करना चाहते हैं। आपकी इस बारे में क्या राय है, उनको बतानी होगी?" वज़ीर ने पूछा।

"मैं सुल्तान का बड़ा अभारी हूँ। पर अच्छा होगा न यदि वे काफ़िले के आने तक इन्तजार करें! राजकुमारी से शादी करने के लिये तो बहुत कुछ करना होता है। दुल्हिन को कम से कम पाँच हजार सोने की थैलियाँ देनी होंगी। शादी के दिन गरीबों को हजार सोने की थैलियाँ

बाँटनी होगी। सैनिकों के विनोद के लिये एक हजार थैलियाँ और देनी होंगी। दुल्हिन को मुझे सौ जवाहरात देने होंगे, दास दासियों को भी सौ गहने देने होंगे। जबतक मेरा काफ़िला नहीं आता, मैं यह सब कैसे कर सकूँगा!" मारूफ़ ने सगर्व कहा।

वजीर ने जाकर ये बातें सुल्तान से कहीं। सुल्तान का सिर चकरा गया। उसने तुरत मारूफ़ को बुलाकर कहा।

"व्यापारियों के शिरोमणि, इस शादी को तुरत करवाना होगा। जो कुछ शादी में खर्च होगा, वह सब मैं दूँगा। मेरा खजाना रुपये पैसों से भरा पड़ा है। जितने रुपये की तुम्हें जरूरत हो उतना बिना किसी संकोच के ले लो। जो तुम दुल्हिन को देना चाहते हो वह काफ़िले के आने के बाद दे देना। परन्तु मुहूर्त को स्थगित करना मुझे बिल्कुल पसन्द नहीं है।"

मारूफ़ इसके लिए मान गया। उसकी और सुल्तान की लड़की की शादी के लिए सब तैयारियाँ होनी शुरु हो गईं।

मारूफ़ को दुल्हा बनाकर एक घर में सिंहासन पर बिठाया गया। उसके सामने गवय्यों ने गाया, नर्तकियों ने नाचा, विदूषकों ने हास्य किया। बड़े बड़े पहलवानों ने मल्लयुद्ध किया।

उस दिन, वह खजाने से थैलों में सोना मँगाता ही रहा। खजाने से सोना लाते लाते वज़ीर के हाथ दुखने लगे। उसने मारूफ़ के पास आकर उसके कान में कहा—"अल्लाह तुम्हें माफ़ नहीं करेंगे। नगर के व्यापारियों के सोने को तो इधर उधर फेंका ही अब सुल्तान के खजाने का धन भी बरबाद कर रहे हो।"

"इसमें तुम्हारा क्या जाता है ! मेरा काफ़िला आने दो, मैं सुल्तान को उनके दिये हुआ का दुगना तिगुना दूँगा।" मारूफ़ ने कहा।

चालीस दिन के जल्सों के बाद शादी का दिन आया। जब शादी का जलूस निकला तो मारूफ़ ने दोनों हाथों से गली में सोना बिखेरा।

आखिर दुल्हे और दुल्हिन को शयन कक्ष में भेजा गया। मारूफ़ फर्श पर गिर गया। उसके आँखों में आंसू आगये।

सुल्तान की लड़की ने उसके पास आकर पूछा—"क्यों यों शोक कर रहे हो ! तुम पर कोई आफ़त आ गई है !"

"यह सब खुदा जानता है। और इस प्रकार सब कुछ हो जाने का कारण तुम्हारा पिता ही है।" मारूफ़ ने कहा।

"अब क्या गल्ती हुयी है ?" सुल्तान की लड़की ने पूछा।

"हुई क्यों नहीं है ! सब मुझे देखकर बुरा भला कह रहे हैं। अगर मेरे काफ़िले के आने तक यह शादी रोक दी गई होती तो मैं तुम्हें कैसे कैसे कपड़े देता, कैसे कैसे गहने देता ! शादी तो बड़े जोर शोर से हुई। किन्तु क्यों कि मैंने तुम्हें कुछ नहीं दिया है इसलिये सब मुझे नीची नजर से देख रहे हैं।" मारूफ़ ने कहा।

"क्या इसी के लिए इतना दुख करने की जरूरत है ?" सुल्तान की लड़की ने पूछा।

शादी के एक दिन बाद मारूफ़ ने नौकरों को, रसोई से लेकर वज़ीर तक, सबको, कपड़े और सोना दिया। ये दान वगैरह बीस दिन तक चलते रहे। सुल्तान का खजाना खाली हो गया। पर तब भी मारूफ़ के काफ़िले का कहीं पता न था।

वज़ीर ने सुल्तान से कहा—"महाप्रभु। खजाना खाली होगया है। दामाद साहब का काफ़िला कहीं आता नजर नहीं आता। क्या किया जाये ?"

सुल्तान यह सुनते ही घबरा गया। "हाँ, हाँ, अब क्या किया जाये ?" उसने पूछा।

"मैंने पहिले ही कहा था कि इस ठग का विश्वास न कीजिए। मुझ से पूछा जाये तो मैं कहूँगा कि इसका कोई काफ़िला ही नहीं है। आपको धोखा देकर, बिना कानी कौड़ी दिये, उसने आपकी लड़की से शादी करली है। और तो और आपका खजाना भी खाली कर दिया है। इस निकम्मे को और कबतक यहाँ रखेंगे ? तुरत इससे प्रायश्चित करवाइये।" वज़ीर ने कहा।

"अगर उसके बारे में सच मालूम हो तो कितना अच्छा हो।" सुल्तान ने लम्बी साँस छोड़ते हुये कहा।

"हुजूर ! पति अपना रहस्य पत्नी के सामने नहीं छुपा सकता। उसके बारे में सच जानने के लिए क्या आप मुझे अपनी लड़की से एक बार बात करने देंगे ?" वज़ीर ने पूछा।

सुल्तान मान गया। एक परदा लटकाया गया। सुल्तान की लड़की परदे के पीछे आकर खड़ी हो गई। वज़ीर ने परदे के इस तरफ़ खड़े होकर कहा—"खजाना खाली हो गया है। और खाली करने वाले आपके पति ही हैं। रात दिन सुन तो रहे हैं कि उनका एक काफ़िला है पर उसे देखा किसीने नहीं है। इस मारूफ़ नाम के आदमी के बारे में क्या आप कुछ जानती हैं? क्या उनका विश्वास किया जा सकता है? ये बातें मेहरबानी करके आपको बतानी होंगी। सुल्तान साहब की इजाजत पर ही मैं आपसे ये बातें पूछ रहा हूँ।"

"वे रोज मुझ से कह रहे हैं कि मुझे अनगिनित मोतियाँ, हीरे, गहने आदि देंगे। मैंने भी उन्हें अभी तक आंखों देखा नहीं है।" सुल्तान की लड़की ने कहा।

"महारानी! यह बात क्या है, आप ही पूछकर देखिये। यह उनसे कहिये कि आप उनका भेद किसी को नहीं बतायेंगी।" वज़ीर ने कहा।

"वैसा ही करूँगी।" सुल्तान की लड़की ने कहा।

उसने उस दिन मारूफ़ से पूछा— "आप कम से कम मुझ से तो सच कहते ! मेरे पिताजी को मालूम हो गया है कि न आपका कोई काफ़िला है न कुछ और ही। वे आपको कड़ी सजा देंगे। वाकई, आपकी बात क्या है, आप बता दीजिये जरूरत हुयी तो मैं सहायता करूँगी।"

मारूफ़ ने कुछ न छुपाया। उसने अपनी सारी कहानी सुल्तान की लड़की को सुना दी। सब सुनकर वह खूब हँसी। "इस प्रकार का दिन दहाड़े धोखा मैंने कभी नहीं सुना है। अगर आप यहाँ रहे तो हमारी जान नहीं बचेगी। वज़ीर और मेरे पिता मिलकर आपको कत्ल करवा देंगे। मेरे पास पचास हजार दीनारें हैं। उन्हें लेकर अभी किसी दूर देश चले जाइये। जाने के बाद, किसी आदमी के द्वारा अपने कुशल समाचार भेजिये।" उसने कहा।

मारूफ़ ने वह पैसा ले लिया। गुलामों के कपड़े पहिने। सुल्तान के अस्तबल से उसने एक अच्छी नस्ल का घोड़ा लिया। और उसी रात को वह फरार हो गया।

अगले दिन सवेरे, सुल्तान ने अपने लड़की को बुलवाया। वज़ीर भी उनके साथ था। उसके परदे के पीछे बैठ जाने के बाद सुल्तान ने पूछा—"बेटी! तुमने अपने पति के बारे में क्या मालूम किया?"

"उनकी जबान गिरे जो झूट बोलते हैं।" सुल्तान की लड़की ने कहा।

"क्या बात है?" सुल्तान ने पूछा।

"कल रात को किसी ने आकर मेरे पति को एक पत्र दिया। उस पत्र को लेकर मैने पढ़ा। मेरे पति के काफ़िले में काम करने वाले पाँच सौ गुलामों ने यह पत्र लिखकर भेजा था। दो हजार डाकुओं ने घोड़ों पर सवार होकर काफ़िले पर हमला किया। घमासान युद्ध हुआ। कितने ही गुलाम और खच्चर मारे गये। इसीलिए काफ़िले के आने में देरी हुई। यह जानकर भी कि सत्तर हजार दीनारों का नुक्सान हो गया है, मेरी पति ने कहा कोई बात नहीं। वे तुरत घोड़े पर सवार होकर चले गये। उन्होंने कहा कि वे अपने साथ काफ़िले को लायेंगे।" सुल्तान की लड़की ने कहा।

यह सुन सुल्तान को बड़ी खुशी हुयी। उसने वज़ीर की ओर मुड़कर कहा—"आयन्दा कभी मुझे इस प्रकार झूट न बताना, समझे। नहीं जानते हो, तो ज़बान को काबू में रखो।"

इस बीच मारूफ़, घोड़े पर सवार हो रेगिस्तान की ओर निकल पड़ा। परन्तु उसका दिल सुल्तान की लड़की पर ही था। दुपहर होते होते वह एक गाँव में पहुँचा। उसे बड़ी सख्त भूख लग रही थी। पास में, एक किसान अपना खेत जोत रहा था। उसने मारूफ़ को देखकर कहा—"हुजूर का भला हो।" उसने सोचा कि वह कोई बहुत बड़ा राजकर्मचारी होगा।

मारूफ़ ने घोड़े से उतर कर पूछा—"कौन हो भाई तुम! उस गाँव में जो यहाँ दिखाई दे रहा है, खाना मिलेगा!"

"यह ज़मीन मेरी ही है। हमारा गाँव बहुत छोटा है। यहाँ कोई होटल वगैरह नहीं हैं। आप क्यों फ़ालतू तकलीफ़ करते हैं। आप यहीं रहिये। मैं घर जाकर आपके लिए भोजन बनवाकर ले आता हूँ। फिर आप अपनी राह जा सकते हैं।" किसान ने कहा।

बहुत देखा पर किसान वापिस न आया। क्यों कि उसके कारण ही बिचारे किसान का काम खराब हुआ था इसलिये मारूफ़ स्वयं हल लेकर खेत जोतने लगा।

बैल थोड़ी दूर गये थे कि हल अटका। बैलों ने बहुत जोर लगाकर खींचा पर हल आगे नहीं गया।

हल क्यों रुका था, मारूफ़ ने जानना चाहा। उसने ज़मीन खोदी तो उसे एक पत्थर दिखाई दिया। उसे देखकर मारूफ़ को आश्चर्य हुआ, उसने अपना सारा बल लगाकर उसको एक तरफ़ हटाया। पत्थर
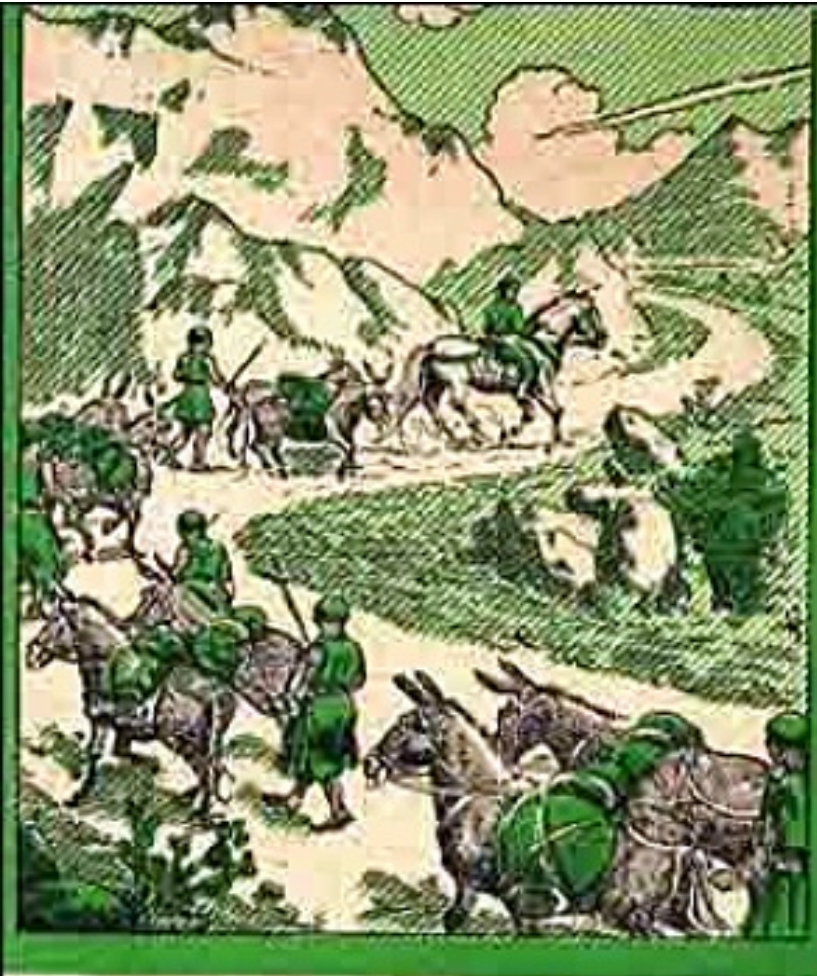
के नीचे उसे कुछ सीढ़ियाँ दिखाई दीं। मारूफ़ सीढ़ियाँ उतर कर गया। नीचे एक कोठी-सी थी। उसमें चार कमरे थे। उनमें सोने के ढेर, मोतियों के ढेर और रत्नों के ढेर थे। हजारों वर्ष पहिले किन्ही राजाओं ने अपना धन उस कोठी में रखा था। फिर वह राज वंश खतम हो गया। उस जगह रेगिस्तान बढ़ आया। मारूफ़ को अपने भाग्य पर ही विश्वास न हुआ। वह फिर ऊपर आ गया। पत्थर को उसकी जगह रख दिया। उस पर मिट्टी डाल दी और किसान की प्रतीक्षा करने लगा।

थोड़ी देर बाद किसान ने तरह तरह के पकवान मारूफ़ के सामने रखकर कहा—"खास आपके लिए रसोई करनी पड़ी इसलिए देरी हो गई। माफ़ कीजिये।"

"तुम बहुत भोले भाले अक्लमन्द मालूम होते हो। मेरे पास पचास हजार दीनारें हैं। ये तुम ले लो और जमीन मुझे देदो। यह पैसा लगाकर व्यापार करो। खेती करने से तुझे क्या मिलेगा?"

किसान की खुशी का ठिकाना न था। जितना रुपया सुल्तान की लड़की ने उसे दिया था उसने किसान को दे दिया, और जमीन अपने नाम लिखवाली। वह कुछ दिन किसान के घर में ही रहा। और जहाँ कहीं कोई खच्चर मिलता तो वह खरीद लेता। छोटे मोटे काफ़िले अगर उस तरफ़ आते तो उनको उनके गुलामों सहित खरीद लेता। एक महीने में उसने पाँच सौ खच्चर और पाँच सौ गुलाम खरीद लिए। जमीन में जो कुछ उसे मिला था उसे लेकर वह फिर खातान नगर गया।

इस बीच, नगर में सुल्तान बहुत घबरा गया। खजाना खाली हुए एक महीना हो गया था। सुल्तान की लड़की ने

बताया कि उसका पति काफ़िला लेने गया था। वह वापिस आयेगा और रुपया लायेगा, यही आस बाँधे सुल्तान दिन गिन रहा था।

अन्त में वज़ीर ने कहा—"हुजूर! आप अपनी लड़की की झूठी बातों में आ गये और फ़ाल्तू बहक गये। आपके दामाद काफ़िला लाने के लिए नहीं गये हैं, अपने प्राण बचाने गये हैं। उनका काफ़िला कहाँ है?"

ठीक उसी समय एक सैनिक आया, और उसने सुल्तान को सलाम करके कहा—"हुजूर! दामाद साहब वापिस आ रहे हैं।"

सुल्तान का मुँह खिल-सा उठा। और वज़ीर का मुँह मुरझा-सा गया। मारूफ़ ने आते ही सुल्तान को गले लगाकर कहा—"मेरे अनुमान से कहीं अधिक नुक्सान हुआ। मैं थोड़ा ही ला पाया। आइये देखिये।" वह सुल्तान को अपने धन के पास ले गया।

राज महल के सामने सब गट्ठर उतारे गये थे। और खच्चर उनके एक तरफ़ खड़े थे। जो हजारों आदमी, वह धनराशि
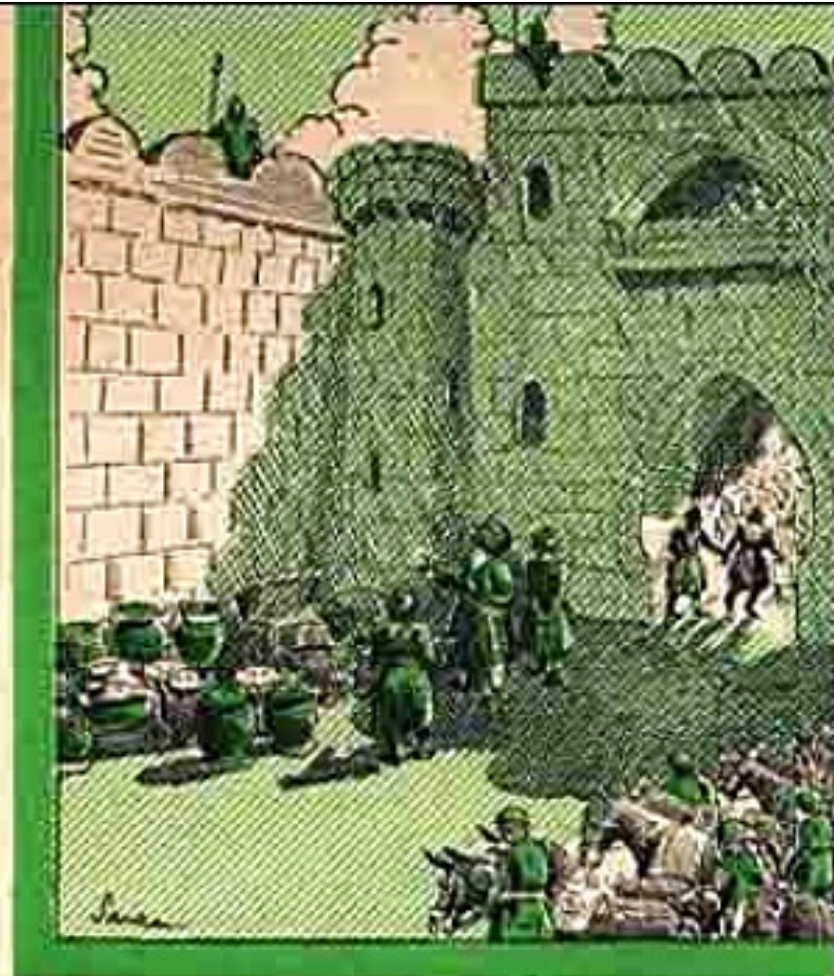
देखने आये थे दूर खड़े थे। सैनिक उनको घेरे हुए थे।

मारूफ़ की लाई हुयी दौलत को देखकर सुल्तान की आखें चौंधियाँ गईं। किसी गट्ठर में मोती ही मोती थे, किसी में हीरे ही हीरे, किसी में लाल तो किसी में पन्ने। किसी गट्ठर में सुपारी जितने बड़े बड़े मोती थे।

"क्या यह सब तुम्हारा माल है?" सुल्तान ने आश्चर्य से पूछा।

"इतना और तो डाकू ले गये। जो बचा उसे मैं ले आया।" मारूफ़ ने कहा।

सुल्तान ने अपने वज़ीर की ओर मुड़कर पूछा—"अब क्या कहते हो?"

"हुज़ूर। यह सब देखकर आप धोखे में न आइये। इसमें जरूर कुछ धोखे की बात है।" वज़ीर ने कहा।

"इस नीच को ले जाकर फाँसी चढ़ाओ।" सुल्तान ने अपने सिपाहियों से कहा। तुरत वे वज़ीर को पकड़ करके ले गये।

सुल्तान ने मारूफ़ को अपना वज़ीर बनाया और अपना वारिस भी निश्चित किया।

क्योंकि मारूफ़ का काफ़िला वापिस आ गया था, इसलिए बहुत बड़ी दावत दी गई। उस दावत में नगर के सब व्यापारी हाजिर हुये। उनमें अलि भी था। मारूफ़ ने सबके कर्ज का दुगना तिगुना उन्हें दे दिया। "हम जानते थे कि आपका पैसा कहीं नहीं जायेगा। परन्तु क्योंकि हम छोटे मोटे व्यापारी हैं इसलिए हम बहुत देर सब्र न कर सके।" व्यापारियों ने कहा।

अलि को काटो तो खून नहीं। अलि नहीं जानता था कि मारूफ़ इतना धन कहाँ से लाया था।

इसी तरह सुल्तान की लड़की के आश्चर्य का ठिकाना न था।

"यह सब कहाँ से आया? क्या आपने मेरे प्रेम की परीक्षा लेने के लिए झूट बोला था?" उसने अपने पति से पूछा।

मारूफ़ ने उसे सच बता दिया। उसके बाद वे बहुत दिन सुख से रहे। उनके कई बाल बच्चे हुए। ससुर के मर जाने के बाद मारूफ़ खातान शहर का सुल्तान बना। उसने बहुत दिन वैभव के साथ राज्य किया। (समाप्त)

अच्छा और बुरा दरवाज़ा

एक गाँव में संगम लाल और रतन लाल नाम के दो नवयुवक रहा करते थे। वे दोनों छुटपन से पक्के दोस्त थे। थोड़े दिनों बाद, रतन लाल को रोज़ी के लिए गाँव छोड़कर दूर जाना पड़ा। संगम लाल ने जो कुछ ज़मीन थी, उसमें अच्छी खेतीबाड़ी की, पैसा कमाया, गाय, भैंस बढ़ाये, शादी कर ली, अच्छा मकान भी बनवा लिया। वह मज़े में था।

गाँव छोड़ने के सात साल बाद रतन लाल उस तरफ़ आया। उसने बचपन के साथी संगम लाल को देखकर उसका हालचाल जानना चाहा। जहाँ पहिले छोटा घर था, अब बड़ा घर था। उसके सामने का इमली का पेड़ बहुत बढ़ गया था। वहाँ एक चबूतरा भी बना दिया गया था।

"कोई फ़िक्र नहीं! संगम लाल मज़े में है।" यह सोचता रतन लाल, संगम लाल के मकान के पास आ ही रहा था, कि बरान्डे में से एक कुत्ता भौंकता-भौंकता, तेज़ी से उसकी तरफ़ आया। कुत्ते का भौंकना सुन, संगम लाल की पत्नी ने दरवाज़ा खोलकर देखा। कुत्ते को दूर भेज दिया। आँखें टेढ़ी-मेढ़ी करते उसने रतन लाल की ओर देखा।

"क्या संगम लाल का घर यही है?" रतन लाल ने पूछा। उसने सिर हिलाकर बताया कि वह उसका ही घर था।

"घर में है या कहीं गया हुआ है?" रतन लाल ने पूछा।

"मैं क्या जानूँ, मुझे बताकर नहीं गये हैं।" संगम लाल की पत्नी ने कहा।

"एक समय, मैं और संगम लाल पक्के दोस्त थे। सात साल पहिले यह गाँव छोड़कर गया था। बचपन के यार को देखने आया हूँ और ऐन वक्त पर अब वह घर में नहीं है।" रतन लाल ने कहा।

संगम लाल की पत्नी ने यह सुनकर कुछ न कहा। रतन लाल को घर के अन्दर आने के लिए भी न कहा।

खूब धूप हो रही थी। रतन लाल इमली के पेड़ के नीचे के चबूतरे पर लेट गया। दुपट्टे से पसीना पोंछते हुए उसने पूछा—"मुझे मालूम नहीं है....जानना चाहता हूँ, तुम संगम लाल की क्या होती हो? क्या पत्नी हो?"

उसने सिर हिलाकर बताया कि वह पत्नी थी।

"बहुत अच्छा! लगता है शादी नई हुई है। शायद बाल-बच्चे नहीं है। क्या धूप पड़ रही है....जरा पीने के लिए पानी दोगी?" रतन लाल ने कहा।

उसने घर से, एक लोटे में पानी लाकर दिया। क्योंकि पानी घड़े का न था, इसलिए ठंडा न था। मुख में डालने पर उसमें थोड़ी बू भी आयी। रतन लाल ने पानी फेंककर लोटा देते हुए कहा—"अब मुझे जाना होगा। अफ़सोस, संगम लाल से न मिल सका। अगर वह आये तो कहना कि मैं आया था। मेरा नाम रतन लाल है। कहना कि यह जानकर मुझे बड़ी खुशी हुई कि वह अब एक बड़ा आदमी हो गया है। यह मकान भी बहुत सुन्दर है। परन्तु मुझे यह दरवाज़ा बिल्कुल पसन्द नहीं है। बुरा न मानना कि मैंने साफ़ साफ़ बात कह दी है। यह बिल्कुल अच्छा नहीं है। मैं बढ़ई हूँ और दरवाज़ों की बात अच्छी तरह जानता हूँ।

नहीं मालम कि संगम लाल ने यह देखा है कि नहीं पर उससे कहना कि मुझे यह कतई पसन्द नहीं है।" रतन लाल उठकर अपने रास्ते पर चला गया।

उस दिन रात को अन्धेरा होने तक संगम लाल घर न आया। जब वह न था तब रतन लाल चला गया था, यह जानकर उसे बड़ा रंज हुआ—"उसे क्यों तुमने जाने दिया? उसने क्या कहा था?"

"उसने कहा कि उसे इस बात की बहुत खुशी थी कि हम खुश हाल हैं। घर भी उसने अच्छा बताया, पर उसे हमारा बाहर का दरवाज़ा पसन्द न आया। वह बढ़ई है।" उसकी पत्नी ने कहा।

संगम लाल को आश्चर्य हुआ। उसने बाहर के दरवाजे को गौर से देखा। पर उसमें कोई कमी न दिखाई दी।

एक साल हो गया। फिर गर्मियाँ आईं। रतन लाल का उस इलाके में फिर एक बार आना हुआ। इस बार भी उसने संगम लाल को देखना चाहा। उसके घर जाकर उसने बाहर से पुकारा—"संगम लाल....!"

संगम लाल की पत्नी ने दरवाज़ा खोला। रतन लाल को देखकर कहा—"आइये!"
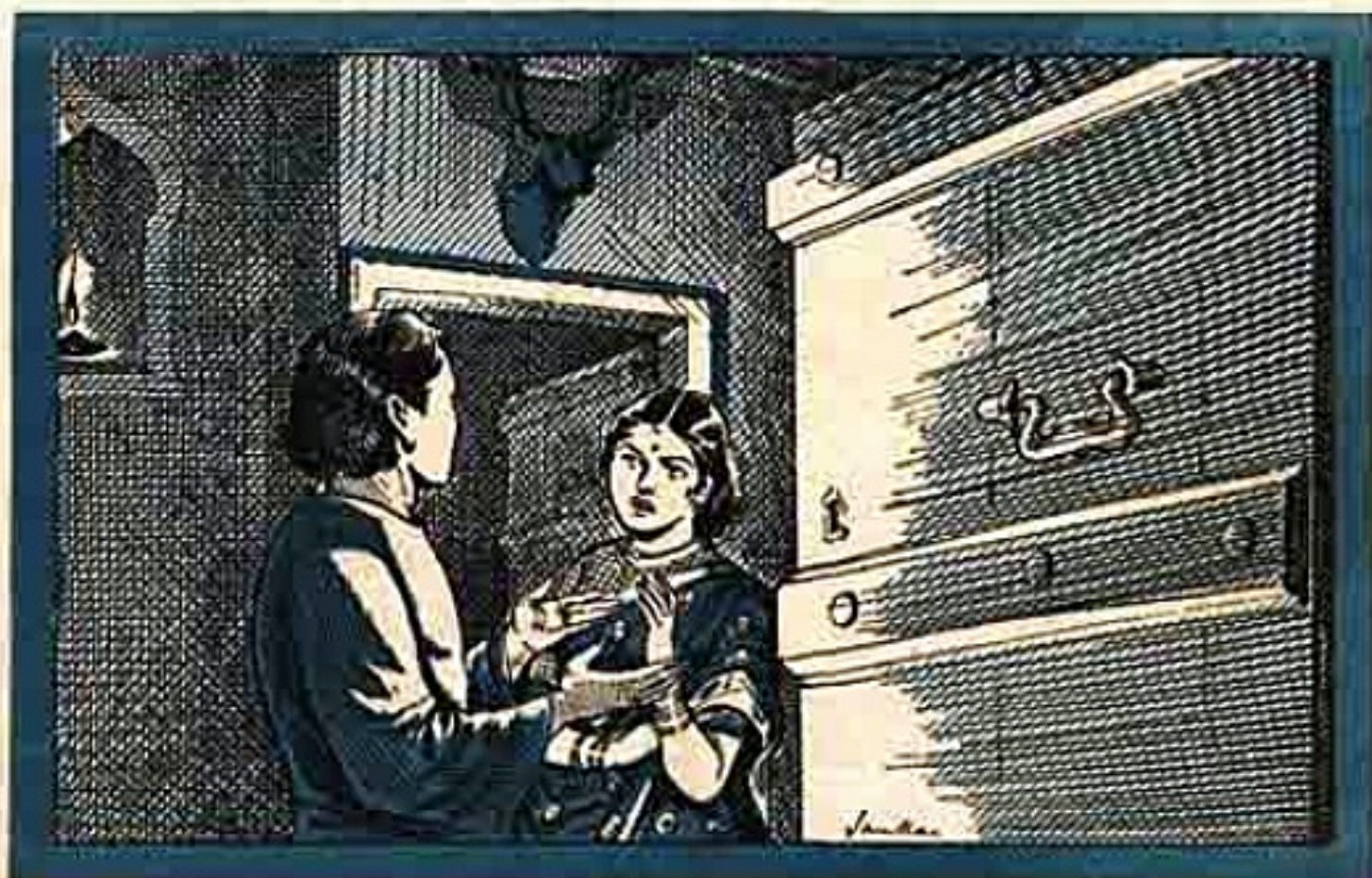
"क्या संगम लाल है?" रतन लाल ने पूछा।

"नहीं हैं, बाहर गये हैं। जल्दी ही वापिस आ जायेंगे। आप अन्दर आइये!" उसने कहा।

कड़ी धूप पड़ रही थी। फिर भी रतन लाल ने एक ओर सिर मोड़कर कहा—"जाने दो, इस पेड़ के नीचे ही काफ़ी आराम है!" कहता कहता वह चबूतरे की ओर गया।

"आप तो चबूतरे पर ऐसे बैठने जा रहे हैं जैसे हमारा घरबार ही न हो। अन्दर आइये।" संगम लाल की पत्नी ने कहा।

"अच्छा, तुम्हारी मर्ज़ी!" कहता रतन लाल उसके साथ अन्दर गया।

घर के अन्दर ठंडक थी। आराम था।

"मैंने सोचा था कि इस बार कम से कम संगम लाल दिखाई देगा। ऐसा लगता है कि मेरे भाग्य में उसे देखना लिखा ही नहीं है।" रतन लाल ने कहा।

संगम लाल की पत्नी अन्दर जाकर, बड़े थाल में तीन गिलास रखकर लाई और उन्हें उसके सामने रखा। उनमें से एक में मट्ठा था दूसरे

में नारियल का पानी और तीसरे में घड़े का पानी। "इन्हें लीजिये, भोजन के समय वे आएँगे। तब तक आराम कीजिए। धूप में आए हैं!" संगम लाल की पत्नी ने कहा।

"अरे, संगम लाल की पत्नी इतनी बदल गई है!" रतन लाल को मन ही मन अचरज हुआ।

थोड़ी देर बाद संगम लाल की पत्नी ने आकर कहा—"समय हो गया है, आप भोजन के लिए उठिये।"

"अभी क्या जल्दी है! संगम लाल को आने दो।" रतन लाल ने कहा।

"उन्हें तो अपनी ही भूख नहीं मालूम। जाने कब घर पहुँचेंगे! आप भला क्यों उनके लिए बिना खाये पिये रहें! भोजन के लिए उठिए, जब खाना गरम है, तभी खाइए।" संगम लाल की पत्नी ने कहा।

रतन लाल को सचमुच बहुत भूख लग रही थी। भोजन बहुत अच्छा था। खाने के बाद रतन लाल सो गया। सूर्यास्त के बाद उठा।

तब भी संगम लाल घर वापिस न आया। "अब मुझे जाना होगा। संगम लाल को देख ही न सका।" रतन लाल ने कहा।

"जाइये मत! अगर आप इस बार भी उन्हें बिना देखे चले गये, तो वे बड़े झुंझलाएँगे। आज रहिये, कल जा सकते हैं।" संगम लाल की पत्नी ने कहा।

"नहीं, जाना ही होगा। मेरे साथ और भी सफ़र करनेवाले हैं। वे इन्तज़ार कर रहे होंगे। मैं रहना तो चाहता हूँ, पर वह सम्भव नहीं है। तुम्हारा घर, बाग़ वगैरह देखकर मुझे बहुत खुशी हुई। मैं दरवाज़े के बारे में बहुत कुछ जानता हूँ। मैं बढ़ई हूँ। यह बहुत अच्छा दरवाज़ा है। बहुत अच्छा।" रतन लाल उससे विदा लेकर चला गया।

संगम लाल जब वापिस आया तो उसकी पत्नी ने रतन लाल के बारे में कहा। उसने जो कुछ कहा था, वह भी बताया। सब सुनकर संगम लाल ने कहा—"रतन लाल बड़ा लायक है। अच्छा मित्र है। बहुत अक़्लमन्द भी है।"

"जब वह पिछली बार आया था, तो उसने कहा था हमारे घर का दरवाज़ा बिल्कुल अच्छा न था और इस साल उसने उसी की प्रशंसा की है!" पत्नी ने कहा।

"जब उसने पिछले साल कहा था कि हमारा दरवाज़ा अच्छा नहीं है, मुझे कुछ समझ में न आया। पर जब उसने इस साल हमारे दरवाज़े की प्रशंसा की तो मैं सब समझ गया। जानते हो उसने वैसा क्यों कहा था! जब पिछली बार वह आया था, तुमने उसका अच्छी तरह आतिथ्य नहीं किया था इसलिए उसे हमारे घर की ड्योढ़ी पसन्द न आई। लगता है, इस बार तुमने उसकी अच्छी तरह आवभगत की है, इसलिए उसे यह सब पसन्द है!" संगम लाल ने कहा।

★ फँदे में फँसा भालू ★

एक बार लोमड़ी को शाक-सब्जी बोने की सूझी। उसने अपने घर का पिछवाड़ा ठीक किया और वहाँ शाक-सब्जी के बीज बोये। जब वे बड़े होने लगे तो वे गायब भी होने लगे।

उसे लगा कि कोई उसके बाग में चोरी कर रहा था। उसने चोर को पकड़ने की बहुत कोशिश की। पर चोर का कुछ पता न लगा। लोमड़ी के बाग में चोरी करनेवाला और कोई न था सिवाय खरगोश के। क्योंकि खरगोश बहुत होशियारी से चोरी कर रहा था इसलिए लोमड़ी को चोर का पता न लग सका।

लोमड़ी ने आखिर चोर का रास्ता जान लिया। बाग के चारों तरफ़ की काटों की मेंढ़ में एक जगह छेद था। चोर उसी छेद में से आता होगा।

यह पता लगते ही लोमड़ी ने चोर पकड़ने की एक चाल सोची। मेंढ़ पर बढ़े हुए बाँस से एक रस्सी बाँधकर एक फन्दा तैयार किया। फिर उसने बाँस को इस तरह झुकाया ताकि वह फन्दे के ऊपर आ जाय। काँटों में से किसी का अन्दर घुसते ही, बाँस के ऊपर उठ जाने का प्रबन्ध कर लोमड़ी घर में चली गई।

उस दिन खरगोश ने काटों में से आगे पैर रखा ही था कि फन्दा, खरगोश की पीठ पर फँस गया। बाँस ऊपर उठ गया। और खरगोश हवा में लटकने लगा।

खरगोश को कुछ न सूझा कि क्या करे। वह मदद के लिए चारों तरफ़ देख रहा था कि एक भालू शहद के छत्ते खोजता उस तरफ़ जाता दिखाई दिया।

श्री सुमन कुमार जोशी

"भालू भाई।" खरगोश ने पुकारा।

भालू ने सिर उठाकर देखा। आश्चर्य से उसने पूछा—"यह क्या? यहाँ क्या कर रहे हो?"

"लोमड़ी के आँगन का पहरा दे रहा हूँ। रात भर पहरा देता हूँ, और लोमड़ी केवल एक रुपया देती है। पर बात यह है कि मुझे देखकर चोर डर नहीं रहे हैं। मैं तुम जैसा तो गम्भीर हूँ नहीं। तुम क्या यह काम करोगे? बाल बच्चे वाले हो।" खरगोश ने पूछा।

भालू को लालच आया। उसने बाँस को नीचे किया। फँन्दे में से खरगोश को निकाला और खुद फन्दे में बँधगया।

खरगोश तुरत भागा भागा लोमड़ी के पास गया। उसने उसे उठाकर कहा—"चोर फन्दे में फँस गया है, आ देख।"

लोमड़ी छड़ी लेकर आई। भालू से पूछा—"तुझे यह क्या बीमारी हुयी है?"

भालू ने कुछ कहना चाहा। "उसके मुख पर मार" खरगोश ने कहा।

लोमड़ी भालू के मुख पर मारने लगी। इस बीच खरगोश भाग गया। और एक दलदलवाले गड्ढे में नाक तक डूबकर बैठ गया।

थोड़ी देर बाद भालू ने लोमड़ी से सारी बात कह दी। फन्दे से बाहर आकर भालूने खरगोश की खोज शुरू की। गड्ढे के पास आकर उसने खरगोश का सिर देखकर समझा कि यह कोई मेंढक था। उसने उससे पूछा—"क्यों मेंढक, क्या खरगोश इस तरफ़ आया था?"

"अभी इधर गया है।" खरगोश ने कहा। भालू को गलत रास्ते पर भेजकर खरगोश निश्चिन्त हो, अपने घर चला गया।

मित्र-संप्राप्ति

लघुपतनक तब उतर पेड़ से
आया उसके बिल के पास,
चित्रग्रीव के स्वर में उसने
कहा, 'बंधु आओ तो पास !'

हिरण्यगर्भ ने बिल के अन्दर
से ही उसको दिया जवाब—
'कौन है रे तू ? पहले इसका
दे दे मुझको तुरत जवाब !'

लघुपतनक ने कहा, 'बंधु मैं
कौआ हूँ, लघुपतनक नाम,
आया हूँ तुमसे ही मिलने
बहुत जरूरी मुझको काम ।'

हिरण्यगर्भ ने कहा तुरत ही—
'भाग, भाग ! मुझसे क्या काम ?
नहीं मिलूँगा तुझसे मैं तो
जानी दुश्मन तू बदनाम !'

लघुपतनक ने कहा, 'बंधु तुम
करो न व्यर्थ यों अविश्वास,
मैत्री करने ही आया मैं
सचमुच आज तुम्हारे पास ।

चित्रग्रीव के बंधन सारे
दिये तुरत ही तुमने काट,
वही देखकर मुग्ध हुआ मैं
जोह रहा मैत्री की बाट ।'

हिरण्यगर्भ यह सुनकर बोला—
'जा, जा, मत यों गप्पें मार,
तुझसे कैसी मैत्री मेरी
तू भक्षक तो मैं आहार ।

मैत्री-शादी होती उनमें
जो होते सब भाँति समान,
सभी तरह से निर्बल हूँ मैं
तू मुझसे बढ़कर बलवान ।'

कौआ बोला, 'बंधु हिरण्यक,
करो, न यों मेरा अपमान,
मित्र बनाओ मुझको अथवा
यहीं तड़प दे दूँगा जान ।'

श्री "भारतीभक्त"

कहा हिरण्यक ने तब उससे—
'सहज शत्रु से हो क्या लाग?
जल को गरम करें कितना भी
पर बुझ जाती उससे आग।

कारणवश यदि बढ़े शत्रुता
तो कर सकते उसको दूर,
लेकिन सहज शत्रुता दिल से
कभी नहीं हो सकती दूर।

सहज शत्रुता है कौओं की
युग युग से चूहों के साथ,
करूँ अगर विश्वास तुझीपर
तो फिर मरूँ तुम्हारे हाथ।

विदित सभी को साँप नेवले
का युग युग से चलता वैर,
घासाहारी पशु सारे हैं
बन जाते हिंसक के कौर।

वैर परस्पर जल पावक में
देवों दनुजों में नित वैर,
वैर श्वान में औ बिल्ली में
महलों का कुटियों से वैर!

सज्जन दुर्जन का भी जगमें
चलता आया है नित वैर,
वैर अकारण होता इनमें
नहीं बढ़ाते मिलकर पैर!'

यह सुनकर फिर कौआ बोला—
'वैर अकारण हो क्यों मीत,
गुणवानों को सदा चाहिए
वैर-भाव तज जोड़ें प्रीत।'

कहा हिरण्यक ने इसपर यह—
'नहीं, नहीं, संभव यह प्रीत,
सहज शत्रु गुण नहीं देखता
बन जाता क्षण में विपरीत।

पाणिनि ने व्याकरण बनाया
लिये सिंह ने उनके प्राण,
मीमांसा के स्रष्टा जैमिनि
की हाथी ने ले ली जान।

छँदशास्त्र में पिंगल का था
सिंधु सरीखा ज्ञान अपार,

सिंधु किनारे ही उनको भी
गया पलक में ग्राह डकार !'

लघुपतनक ने कहा, 'ठीक है
सुन किंतु मेरी भी बात,
कसम हृदय से खाकर कहता
छिपी न मेरे मन में घात।'

हिरण्यगर्भ तत्क्षण ही बोला—
'कह न कसम की तू यों बात,
शत्रु कसम भी खाता है तो
मन में कुछ रखकर ही घात।

कसम इन्द्र ने भी खायी थी
वृत्रासुर को था विश्वास,
लेकिन पीछे उसी इन्द्र ने
किया असुर का सत्यानाश।

नीति यही कहती है, जिसको
सुख, उन्नति, जीवन की चाह,
वह न करे विश्वास किसीपर
चले सदा अपनी ही राह।'

लघुपतनक हो चला निरुत्तर
फिर भी वह बोला रख आस—
'मैं तो मित्र तुम्हारा ही हूँ
करो न चाहे तुम विश्वास।

बिल के अन्दर से ही तुम अब
कहना नीति वचन के सार,
मैं बाहर से लाकर दूँगा
रोज तुम्हारे हित आहार।'

उस दिन से लघुपतनक प्रति दिन
खोज खोज लाता आहार,
हिरण्यगर्भ भी उसे सुनाता
नीतियुक्त अपने उद्गार।

इसी तरह दिन लगे बीतने
आते गये हृदय से पास,
कौए के उपकार बढे औ
चूहे का उसपर विश्वास।

मित्र बने फिर तो वे गहरे
रहा न भय शंका का नाम,
कौए के पंखों की छाया
में करता चूहा विश्राम !

असफल तपस्या

विक्रमार्क तो हार मानने वाला न था। वह फिर पेड़ के पास गया। शव को उतार कर, कन्धे पर डाल श्मशान की ओर चला। तब शव में स्थित वेताल ने कहा। "राजा, तेरा परिश्रम प्रशँसनीय है। पर कहीं ऐसा न हो कि माण्डव्य की तरह तुम भी अन्त में अपना परिश्रम निष्फल कर बैठो। तुम्हें जाते जाते थकान न मालूम हो इसलिये उसकी कहानी सुनाता हूँ। सुनो।" उसने यह कहानी सुनानी शुरू की।

नैमिष वन में माण्डव्य नाम के महामुनि रहा करते थे। उन्हें ऐसा प्रतीत हुआ कि संसार में सिवाय मूर्खता, धोखा, पाप के कुछ न था।

आज के नादान बच्चे कल बड़े होंगे और दुनियाँ भर के पाप करने लगेंगे।

वेताल कथाएँ

जितना वे संसार को देखते, उतना ही उनको उससे घृणा होती। संसार के स्रष्टा पर भी उन्हें गुस्सा आया। इसलिए संसार का नाश करने के लिए उन्होंने शिव की तपस्या करनी प्रारम्भ कर दी।

नैमिष वन के एक निर्जन प्रान्त में एक पैर पर खड़े होकर हाथों को ऊपर उठाकर पद्माकार में रखकर, निश्चल हो, वे घोर तपस्या करने लगे। इस तरह समाधिस्थ होकर उन्होंने कहा—"परमेश्वर! जब तक आप इस सृष्टि का नाश न कर देंगे तब तक मैं इसी प्रकार तपस्या करता रहूँगा।"

कुछ समय बीता। माण्डव्य की तपस्या के प्रभाव से पँच भूतों में गड़बड़ी मची। भूमि काँपी। समुद्र में तूफ़ान उठने लगे। ज्वालामुखी फूट पड़े। दण्डकारण्य में तो प्रलय सी आ गई। पेड़ पौधे जड़ से उखड़ गये। इतना सब होने पर भी माण्डव्य विचलित न हुये। उनको यह जानकर सन्तोष भी हुआ कि उनकी तपस्या के कारण संसार का नाश हो रहा था। इस कारण उनमें और भी शक्ति आ गई। अधिक उत्साह आ गया।
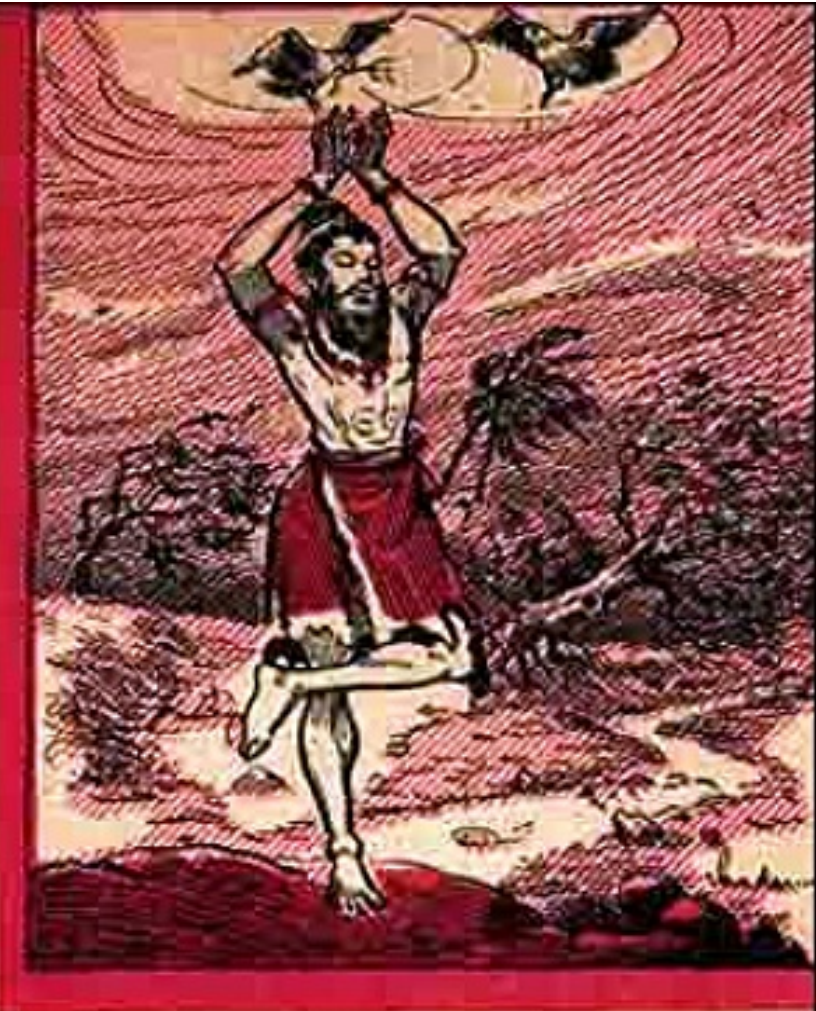
इसी समय दो घुग्घियों ने पेड़ की झुरमुट में घोंसला बनाना शुरू किया। मादा घुग्घी अंडे देने को थी। जल्दी घोंसला बनाना था। उसमें अंडे सेने थे। परन्तु उनके घोंसला बनाने के प्रयत्न सफ़ल न हुए। हवा के कारण कहीं घोंसला टिक न पाता था। शायद कहीं अच्छी जगह मिले, यह देखने के लिए चारों ओर देखा। उन्हें पद्माकार में रखे, माण्डव्य के हाथ दिखाई दिये। जब कि बड़े बड़े पेड़ तूफ़ान में गिर रहे थे, उनके हाथ निश्चल थे।

दोनों घुग्घियों ने हिम्मत करके उनके हाथों पर घोंसला बना लिया। उसमें मादा घुग्घी ने चार अंड़े दिये। उनको सेका। वे फूट गये। बच्चे निकल आये। नर घुग्घी और मादा घुग्घी बारी बारी से उड़ते बच्चों के लिए खाना लाकर देते। धीमे धीमे बच्चे बड़े होने लगे।

यह सब माण्डव्य देख रहे थे। अपनी शरण में आये हुए घुग्घियों और उनके बच्चों के प्रति, उनको एक प्रकार का विचित्र प्रेम हो गया। एक दिन उन्होंने आकाश से एक बाज़ को उतरते देखा। उन्होंने अपने हाथ नीचे कर लिए और घोंसले को अपनी छाती से लगाकर पकड़ लिया।

तब से वे कभी कभी हाथ नीचे रखकर यह देखा करते कि बच्चे कैसे बड़े हो रहे थे। और जब पक्षी मूर्खता करते तो वे मन ही मन हँसते।

बच्चे बड़े हुए। उनके पँख उग गये। वह समय भी आया, जब वे घोंसला छोड़कर इधर उधर उछलने फुदकने लगे। नर घुग्घी घोंसले के ऊपर पँख फड़फड़ाकर उड़ता मानो अपने बच्चों से यह कह रहा

हो—"तुम भी मेरी तरह उड़ो।" वह उनको उड़ने के लिये प्रोत्साहित करता। बच्चो ने भी पँख फड़फड़ाये पर वे उड़ न सके। मादा घुग्घी ने धीमे से उनको घोंसले से धकेलना शुरू किया। बच्चे और भी डर गये। दोनो, नर मादा घुग्घी घोंसले के ऊपर उड़ते रहे, पर तब भी फायदा न हुआ।

ठीक उसी समय माण्डव्य ने दखल दिया। उन्होंने घुग्घियों के घोंसले को एक हाथ पर रख लिया। वे अंगुली से, एक एक बच्चे को घोंसले से हटाने लगे। एक एक बच्चा नीचे गिरता। तुरत वह पँख फड़फड़ाता और फिर उड़जाता, इस तरह चारों घुग्घी के बच्चे उड़ना सीख गये। माण्डव्य का मुँह आनन्द से विकसित-सा हो उठा। "पागल प्राणी, निस्सहाय। बेजबान पक्षी।" उन्होंने सोचा। उस घुग्घी परिवार को देखकर, उनका हृदय प्रेम और दया से सहसा भर गया।

इस बीच, उनको यकायक अपनी तपस्या की याद आई। उन्होंने चारों ओर देखा। तूफ़ान कभी का रुक चुका था। जो वृक्ष पहिले टूट गये थे, अब फिर हरे

भरे थे। माण्डव्य जान गये कि ईश्वर ने उनकी इच्छा पूरी न की थी। पर वे निराश न हुए। एक बार आकाश में देखकर वे मुस्कराये। परमेश्वर, तुम इस संसार का क्यों नहीं नाश कर रहे हो, यह अब मुझे मालूम हो गया है। अच्छा, तो तेरी इच्छा के अनुसार ही काम हो।" कहते वे अपने आश्रम चले गये, और सदा आश्रम में रहने लगे।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर पूछा— "राजा! माण्डव्य की तपस्या का भंग होने का कारण क्या था! समाधिस्थ होकर हाथ हिलाना! या घुग्घियों की परवाह करना! उन्हें क्या समझ में आया! ईश्वर इस संसार को क्यों नहीं नष्ट करता! अगर तुमने जान-बूझकर इन प्रश्नों का उत्तर न दिया, तो तुम जानते ही हो कि तुम्हारा सिर फूट जायेगा।

"माण्डव्य की तपस्या घुग्घियों के कारण भग्न हुई थी। जब से उनको उस पर दया आई थी, उन्होंने तपस्या न की थी। जब मनुष्य माण्डव्य को ही बेठिकाने के पक्षियों पर इतनी दया, इतना प्रेम हुआ, परमेश्वर को प्राणीमात्र पर कितनी दया आ ही होगी, कितना प्रेम होता होगा। शायद ईश्वर भी उसी की तरह सब चीज़ों से घृणा करने लगा होगा। इसलिए उन्होंने संसार के विनाश के लिए तपस्या शुरु की। पर जब उनको यह मालूम हो गया कि परमेश्वर में प्राणि मात्र की मूर्खता, पापों को सहने की शक्ति है, तो उनका उद्देश्य बदल गया।" विक्रमार्क ने यह जवाब दिया।

राजा का इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल, शव के साथ अदृश्य हो गया और पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

[५]

[अनेक कष्टों के सहने के बाद, अनेक सैनिक व अनेक नौकाओं के खो बैठने के बाद ऐसे द्वीप में रूपधर पहुँचा, जहाँ सुकेशिनी रहा करती थी। उसने अपने सैनिकों को दो टोलियों में बाँट दिया। मायर्षी को एक टोली का सरदार बनाकर उस द्वीप को देख आने के लिए कहा। वे सुकेशिनी के घर गये। उसने उनका आतिथ्य किया, और अपने जादू के प्रभाव से उन्हें सूअर बना दिया। परंतु रूपधर पर उसके जादू का असर नहीं हुआ। वह उसकी मित्र बन गयी।]

उसकी सलाह के अनुसार, रूपधर अपने सिपाहियों के साथ समुद्र के किनारे गया। वे नौका के पास दुखी बैठे थे। अपने सरदार को देखकर उनकी जान में जान आई। जैसे माँ को देखकर बछड़े दौड़ते हैं, उसी तरह दौड़कर वे उसके पास गये। अगर इथाका भी पहुँच जाते तो उससे अधिक खुश शायद वे न होते। वे खुशी में आँसू बहाने लगे।

"कहाँ है! हमारे लोग कहाँ हैं?" उन्होंने रूपधर से पूछा।

"वे सब सुकेशिनी के घर में सुरक्षित हैं। आराम से खा पी रहे हैं। पहिले आओ, हम अपनी नौका को किनारे पर

[एक ग्रीक पुराण कथा]

खींचे। रस्सी आदियों को हिफ़ाज़त से किसी गुफ़ा में रख दें। उसके बाद मैं तुम्हें भी सुकेशिनी के घर ले जाऊँगा।" रूपधर ने कहा। सिपाहियों की खुशी का ठिकाना न था।

तुरत उन लोगों ने काम करना शुरू कर दिया। मगर मायावी ने उनसे कहा—"मूर्खो! तुम कहाँ जाने की सोच रहे हो? सुकेशिनी के घर? वह तुम्हें शेर, भेड़िया या और कोई जंगली जानवर बना देगी और अपने घर के पहरे पर रख देगी, जानते हो? भाल लोचन की गुफ़ा में घुसकर हमारे लोगों का क्या हाल हुआ था, जरा उसे याद करो। वह भी इसी रूपधर की करतूत थी। इसी की मूर्खता के कारण वे मारे गये। और अब हमारी यह हालत हुई है।"

यह सुन रूपधर को गुस्सा आया। वह तल्वार लेकर मायावी का गला काटने लपका, परन्तु दूसरों ने उसे रोका—"अगर वह नहीं आना चाहता है तो यहीं बैठा नाव की रखवाली करेगा। हम तुम्हारे साथ सुकेशिनी के घर चलेंगे। आओ चलो।" उन्होंने रूपधर से कहा। परन्तु जब सब जाने लगे तो मायावी भी उनके साथ हो लिया।

सुकेशिनी ने रूपधर के सैनिकों को अच्छी तरह नहलाया धुलाया, उनको अच्छी अच्छी पोषाकें पहिनने को दीं। उनसे पहिले ही, जो मायावी के साथ आये थे, खाना खा रहे थे। दोनों टोलियाँ, आपस में एक दूसरों का मुँह देखकर खुशी को काबू में न रख सकीं और चिल्लाने लगीं। वे सब आश्चर्य में थे।

सुकेशिनी ने रूपधर के पास आकर कहा—"अच्छा हो अगर तुम्हारे आदमी

गुज़री हुई मुसीबतों को भूल जायें। मैं तुम्हारे और तुम्हारे सैनिकों के कष्टों को जानती हूँ। आराम से खाओ, शराब पिओ। जैसे तुम इथाका में सुख से रहते थे वैसे यहाँ भी रहो। यह तुम लोगों का घर ही है।"

रूपधर उसकी सलाह मान गया। वहीं एक वर्ष तक अपने सैनिकों के साथ उसका अतिथि बनकर रहा। एक वर्ष समाप्त होने के बाद रूपधर के सैनिकों ने पूछा—"यह क्या! क्या हम घर वापिस नहीं जायेंगे!"

रूपधर ने सुकेशिनी से कहा—"मेरे सैनिक स्वदेश जाने के लिए उतावले हो रहे हैं। अब मेरा जाना अच्छा है। हमारी यात्रा के लिए तुम्हारी सहायता चाहिये। तुम्हारी मदद से हम अपने देश पहुँच सकते हैं।"

"मैं तुम्हें जबर्दस्ती यहाँ रखना नहीं चाहती। यम के नरक में सांकेतिक नाम का दिव्यज्ञानी है। मरने के बाद उसका दिव्यज्ञान न गया। तुम उससे एक बार मिलकर उसकी सलाह लो।" सुकेशिनी ने कहा।

यह सुनते ही वह हताश हो गया। "बाप रे बाप! सुकेशिनी, क्या नरक जाना मेरे बस की बात है! क्या कोई नौका में नरक गया है?" उसने पूछा।

"तुम्हारे लिए यह ज़रूरी नहीं है कि तुम नौका की पतवार पकड़कर बैठे रहो। मस्तूल उठा दो। पाल फैला दो। चुपचाप बैठ जाओ। उत्तर की वायु तुम्हें सीधे नरक पहुँचा देगी। तुम्हारी नौका, समुद्र पार कर नरक के किनारे पहुँचेगी। वहाँ नरक वृक्ष होंगे। तुम अपनी नौका को किनारे पर बाँध देना। पैदल यम लोक जाना। कुछ दूर जाने के बाद तुम्हें टीला-सा दिखाई देगा। उसी के पास अग्नि नदी और अश्रु नदी मिलकर वैतरणी नदी बनती है। उस पत्थर के पास दो,

तीन गज का गढ़ा खोदो। उस गढ़े में पितरों को तर्पण दो, पिंड दान करो। और उनसे प्रार्थना करो कि तुम्हें सुरक्षित इथाका पहुँचा दें। उनके सामने प्रतिज्ञा करो कि घर जाकर उनको बलि दोगे। साँकेतिक के सामने साष्टाङ्ग करके कहो कि उसको अलग एक काला मेंढा चढ़ाओगे। यह कहकर यम व अन्य नरक-वासियों को प्रणाम करो। इतने में पितर बलि स्वीकार करने के लिए आयेंगे। उनमें साँकेतिक भी होगा। जब तक वह तुम्हें घर जाने का मार्ग व उपाय न बताये, तबतक तुम देखना कि तुम्हारे पितर बलि को न छुयें।" सुकेशिनी ने विस्तार से रूपधर को बताया।

सवेरा हो गया। रूपधर ने अपने सैनिकों को उठाकर कहा—"उठो, आओ चलें, सुकेशिनी ने हमारे लिए एक यात्रा का निश्चय किया है।"

रूपधर के सैनिक इस खुशी में थे कि वे घर जा रहे थे पर जब उन्हें मालूम हुआ कि वे और कहीं जा रहे थे तो वे रोये और चिल्लाये। कई अपने बाल खींचने लगे। परन्तु लाचार उन्हें जाना ही पड़ा।

जब सब मिलकर नौका के पास पहुँचे, तो सुकेशिनी वहाँ पहिले से ही उपस्थित थी। नौका के पास एक काली भेड़ और एक काले मेंढ को छोड़कर बिना किसी से बात किये, वह चुपचाप वापिस चली गई।

ग्रीकों ने अपनी किश्ती को पानी में खींचा। मस्तूल उठाये। पाल फैलाये। काले मेढ़ों को लेकर सब नौका में बैठ गये। सुकेशिनी की कृपा से उत्तर से वायु चलने लगी। पालों में हवा भरी। और नौका हिली। हवा के साथ तेजीसे बहती गई।

पालों में निरन्तर हवा रही। और शाम तक बिना किसी विघ्न, बाधा के यात्रा जारी रही। फिर सूर्य छुप गया। सर्वत्र अन्धेरा छा गया। अन्धेरे में नौका किनारे पर लगी।

रूपधर ने सुकेशिनी के कथन के अनुसार जहाँ अग्नि नदी और अश्रु नदी मिलती थी, वहाँ एक गढ़ा खोदा, तर्पण किया, पिंड दान दिया और पितरों का ध्यान किया। उसने भेड़ों की बलि की और होम किया। उसने अपनी तरफ़ से सारी विधि सम्पन्न की।

तुरत, पितर कोलाहल करते झुण्ड बनाकर बलियों को स्वीकार करने के लिए आये। उसने यम राजा और यम के लोगों को नमस्कार करके पितरों से कहा—"जब तक मैं साँकेतिक से कुछ प्रश्न न पूछ लूँ, तब तक कोई बलि न छुये।"

दूसरों को अलग करती एक स्त्री सामने आई। उसे देखते ही रूपधर हैरान रह गया, क्योंकि वह रूपधर की माता ही थी। रूपधर जब ट्रोय नगर की विजय के लिए निकला था तब वह जीवित थी। रूपधर यह न जानता था कि वे कब मर गई थी।

उसे देखकर रूपधर की आँखों में तरी आ गई। उसे उस पर तरस आई। फिर भी उसने, उसको बलि न छूने दी। उसे दूर ही रखा। उसके पीछे ही साँकेतिक सोने की लाठी लिये आया। उसने रूपधर को पहिचान कर पूछा—"भाई, तुम्हें इस पितृ लोक में क्यों आना पड़ा, जहाँ सूर्य का प्रकाश भी नहीं आता है! थोड़ा हटो। बलि खाकर, जो तुम्हारी मदद करनी होगी, करूँगा। हटो, हमें बलि खाने दो।"

रूपधर एक तरफ़ हट गया और उसको, बलि को खाने दिया। फिर उसने रूपधर

की ओर मुड़कर कहा—" बेटा, तुम स्वदेश जाने के लिए रात दिन एक कर रहे हो। सचमुच, स्वदेश के अतिरिक्त स्वर्ग कहाँ है? परन्तु देवता तुम पर रूठे हुए हैं। इसलिए तुम दुनियाँ भर की मुसीबतें झेल रहे हो। लाचारी है। भले ही कितने कष्ट झेलो, तुम सुरक्षित घर पहुँच जाओगे। तेरे घर के रास्ते में तिनाप्रिय नाम का द्वीप आयेगा। वहाँ सूर्य भगवान के पशुगण होंगे। न तुम न तुम्हारे सैनिकों को ही उनके पास जाना चाहिये। अगर उन पशुओं को किसी प्रकार की हानि हुई तो तुम्हारे सैनिक कभी इथाका न पहुँच सकेंगे। केवल तू मरता जीता अकेला, एक और नौका में घर पहुँचेगा। तब भी तेरे कष्ट ख़तम नहीं होंगे। तेरे घर में शत्रु ही शत्रु होंगे और तेरी पत्नी से शादी करने के लिए प्रयत्न कर रहे होंगे। परन्तु तुम उन्हें जैसे तैसे मार दोगे। इन सब शत्रुओं का विनाश करके, तुम्हें अपने देवताओं के प्रति अपना कर्तव्य निभाना होगा। वह कैसे करना होगा, यह भी तुम्हें बताता हूँ। नौका में चलाये जानेवाले चप्पू को लेकर, तबतक घूमते रहना जबतक तुम्हें ऐसा व्यक्ति न मिले, जो भोजन के साथ नमक न खाता हो, समुद्र क्या चीज़ है यह न जानता हो। ऐसे आदमियों को पाने का मार्ग भी बताता हूँ। वे तेरे कन्धे पर का चप्पू नहीं पहिचान सकेंगे और पूछेंगे कि क्या यह खेती का कोई उपकरण है? ऐसे मनुष्य दिखाई देने पर तू अपने चप्पू को जमीन में गाड़ देना, वरुण देवता को बलि देना। एक मेंढ़े, एक बैल, एक सूअर को बलि देकर तू घर चले जाना। तू काफ़ी दिन जीता रहेगा। और आख़िर समुद्र के किनारे ही तेरी मृत्यु होगी।

उस समय तेरे सम्बन्धी, बन्धु, मित्र तेरे पास ही होंगे। यह तेरे भविष्य के जीवन की कहानी है।"

"अच्छा, तो यही होने दीजिये। क्या मैं विधि को वश में कर सकता हूँ? पर एक बात बताइये। वहाँ मेरी माँ का प्रेत है। वह मेरी तरफ़ देखता नहीं, मुझसे बात नहीं करता, सिर्फ़ बलि की ओर ही देखता है। कोई ऐसा उपाय बताइये, जिससे वह मुझे पहिचान जाये।" रूपधर ने सविनय हाथ जोड़कर उससे कहा।

"बेटा! बलि को छूने तक पितर न कुछ मालूम कर सकते हैं, न कह ही सकते हैं, यह बात याद रखो।" कहता साँकेतिक यमलोक चला गया।

रूपधर वहीं, माँ के बलि हजम करने तक खड़ा रहा। बलि के खाते ही उसने सिर उठाया। अपने पुत्र को पहिचान कर उसके पूछा—"अरे बेटा, जीते जी इस लोक में कैसे आये? यह तो सम्भव नहीं है! ट्रॉय से क्या यहीं सीधे चले आ रहे हो? क्या इथाका नहीं गये? क्या अपनी पत्नी को नहीं देखा?"

"नहीं माँ। मैं घर पहुँचने के लिए नाना प्रकार के कष्ट झेल रहा हूँ। साँकेतिक की सलाह के लिए मुझे यहाँ आना पड़ा। देख, माँ, तुम कैसे मर गई? बीमारी हुयी थी, या बस यूँ हि मर गई थी? पिताजी कैसे हैं? मेरा लड़का क्या कर रहा है? क्या वे मेरी प्रतीक्षा कर रहे हैं? क्या उन्हें अब भी मुझ पर भरोसा है? या वे यह सोचकर कि मैं वापिस नहीं आऊँगा, किसी और के पास चले गये हैं? मेरी पत्नी क्या कह रही है? क्या करने की सोच रही है? लड़के की मदद से

सम्पत्ति की देखभाल कर रही है? नहीं तो क्या किसी आदमी को देखकर, उससे शादी कर ली है?" रूपधर ने माँ से जल्दी जल्दी पूछा।

"वह तुम्हारे घर में ही है, बेटा। जानते हो उसका धैर्य कैसा है! दिन रात उसका दिल दहल रहा है। तेरी सम्पत्ति वगैरह, अभी तेरे नाम ही है। तेरा लड़का विजय ध्वज ही तेरी सम्पति का अधिकारी है। और वह सब काम कर रहा है, जो एक राजा को करना चाहिये। तुम्हारे पिता गाँव में ही हैं....वे नगर न आयेंगे। सरदी में भी उनके पास न कोई बिछोना है, न दुपट्टा ही, पशुओं के पास, आग के पास, सो जाते हैं। और ऋतुओं में अंगूरों के बागों में, नहीं तो जहाँ जगह मिलती है वहाँ सो जाते हैं। बुढ़ापा तो है ही, फिर तेरी भी फ़िक्र है कि तू वापिस नहीं गया है। मेरी मौत के बारे में पूछते हो! मैं किसी बीमारी से नहीं मरी, न अचानक ही मरी... बस तेरी फ़िक्र में ही चल बसी।" रूपधर की माँ ने साफ़ साफ़ सब कुछ कह दिया।

रूपधर ने माँ को एक बार गले लगाना चाहा, पर लगा न सका। तीन बार उसने कोशिश की, पर तीनों बार सफल न हुआ। उसने दीन स्वर में कहा—"माँ, मुझे एक बार गले लगा लेने दो। क्यों तुम....मेरे पास नहीं आती हो!"

"बेटा, जीवित व्यक्ति मृत व्यक्तियों का कैसे आलिंगन कर सकते हैं! जिसे तू आलिंगन करना चाहता है, वह सब तो चिता में भस्म हो चुका है। इस अन्धकारमय यम लोक को छोड़कर तुरत चले जाओ, बेटा! परन्तु यहाँ की बातें याद करके अपनी पत्नी को जरूर बताना।" रूपधर की माँ ने कहा। (अभी और है)

[२]

[मोरोको देश से, चीन आये हुए जादूगर ने अलादीन की माँ से परिचय करलिया। उसने उससे कहा कि वह अलादीन का चाचा था। उसने यह भी वचन दिया कि वह अलादीन को बड़ा आदमी बना देगा। उसे बहकाकर वह नगर के बाहर ले गया। और उसने उसे गुफा में भेजा। जब अलादीन ने गुफा में से लाये हुए लालटेन को न दिया तो जादूगर को गुस्सा आगया। उसने अलादीन को गुफा में ही बन्द कर दिया।]

वह जादूगर सचमुच मोरोको देश का था। वह कई तरह के जादू-टोने जानता था। जब वह छोटा था उसने तभी से व्रत-उपवास करने शुरू कर दिये थे।। और जब वह चालीस वर्ष का हो गया तो उसने बहुत-सी शक्तियाँ पालीं। इन शक्तियों के साथ उसमें गूढ़ रहस्यों को समझने की बुद्धि भी आ गई। इसीलिए वह यह आश्चर्यजनक बात जान सका।

कहीं दूर चीन देश में एक नगर है। उस नगर के पास, भूमि में, संसार का सबसे बडा खज़ाना गड़ा पड़ा है। उस खज़ाने के साथ एक जादू की लालटेन है। जो उस लालटेन को पायेगा, वह इस संसार में जो कुछ जब कभी चाहे पा सकता है। पर अलादीन नाम का एक गरीब लड़का ही उसको बाहर ला सकता था।

ये सब बातें जादूगर ने मोरोको में ही जान ली थीं। इन बातों पर पूर्ण विश्वास करके ही वह जादूगर लम्बी सफ़र के बाद चीन पहुँचा था। इस सफ़र में उसे बहुत मुसीबतें झेलनी पड़ीं। मेहनत करनी पड़ी। परन्तु उसे अलादीन मिल गया। सब काम ठीक तरह हो भी गया। परन्तु आँखिर अलादीन ने लालटेन देने से इनकार कर दिया। जादूगर को गुस्सा आगया। वह अलादीन को गुफ़ा में बन्द करके मोरोको वापिस चलागया।

जब ऊपर का छेद बन्द हो गया तो अलादीन बुरी तरह डर गया और ज़ोर ज़ोर से चिल्लाने लगा। "चाचा, चाचा— मुझे ऊपर निकालो।" चिल्लाता चिल्लाता वह रोया पर वहाँ उसका रोना सुनने वाला कोई न था। अलादीन जान गया कि वह उसका चाचा न था और उसने धोखा दिया था। यह जान कर कि उस गुफ़ा में वह जरूर मर मरा जायेगा, वह सीढ़ियाँ उतर कर बाग की ओर जाने की कोशिश करने लगा। परन्तु सीढ़ियों के अन्त में लगा दरवाजा तब बन्द हो चुका था। इसलिए वह सीढ़ियों पर गिर गया।

अलादीन, तीन दिन तक वहीं रहा। तीनों दिन उसने न कुछ खाया, न पिया ही। वह रोता रहा और रह रह कर अल्लाह को याद करता। मौत से न बच सकूँगा, यह सोचकर वह हाथ मल मल कर रोने लगा। मलते मलते, उसने अपनी अंगुली की अंगूठी भी रगड़ी। वह अंगूठी उसे जादूगर ने ही दी थी।

उस अंगूठी के रगड़ते ही अलादीन को काला, कद्दावर भूत सामने दिखाई दिया। "क्या आज्ञा है हुजूर!" उसने पूछा।

अलादीन का कलेजा थम-सा गया। चूँकि उसने जादूगर के कारनामों को अपनी आखों देखा था, इसलिए उसने हिम्मत करके पूछा—"कौन हो तुम!"

"मैं इस अंगूठी का भूत हूँ। यह अंगूठी जिसके पास होती है उसका मैं गुलाम हो जाता हूँ। जो वे कहते हैं, मैं करता हूँ।" भूत ने कहा।

"यह बात है तो मुझे यहाँ से निकालो।" अलादीन ने कहा।

तुरत भूमि के फटने की आवाज हुयी, और अलादीन भूमि पर खड़ा था। क्यों

कि तीन दिन वह अन्धेरे में था, इसलिए उसकी आखें सूर्य के प्रकाश को न सह सकीं। जब उसने आखिर आखें खोलीं तो यह बात साफ़ हो गई कि वह भूमि पर ही था। न उसे कहीं गुफ़ा दिखाई दी, न संगमरमर का पत्थर ही। वह जगह जरूर थी, जहाँ जादूगर ने आग जलाई थी। वे बाग थे और बागों के बाद शहर दिखाई दे रहा था। अलादीन ने लम्बी साँस छोड़ी। खुदा को दुआ देता वह घर की ओर चला।वह इतनी दूर कैसे पैदल चल सका, उसे ही न पता लगा। घर में घुसते ही वह माँ के सामने बेहोश गिर गया।

उसकी माँ, इतने दिनों उसके लिए रोती पड़ी रही। उसने अलादीन के मुँह पर पानी छिड़का। उसे होश आई। उसे कुछ खाने के लिए दिया। अलादीन में कुछ ताकत आई। "माँ! जो अपने को चाचा बता रहा था, वह सचमुच चाचा न था। वह जादूगर था। उसने मुझे मारने की कोशिश की। उसकी बातों में हम आ गये थे। जानती हो, माँ उसने क्या किया!" अलादीन ने जो कुछ गुजरा था, माँ को सुनाया।

उसकी माँ ने कहा—"वह चोर था, यह मैं तभी जान गयी थी। गनीमत है कि खुदा की मेहरबानी से तू जिन्दा है।" वह कह ही रही थी कि अलादीन झपकियाँ लेने लगा, जैसे किसी नशे में हो, क्यों कि वह तीन दिन सोया तक न था। वह अगले दिन दोपहर तक खूब सोता रहा।

उसने उठते ही कहा—"माँ भूख लग रही है। कुछ खाने को दो।"

"अरे बेटा। घर में तो कुछ खाने के लिए है नहीं। जो कुछ था वह तुझे ही

परोस दिया था। मेरे पास मेरा कता कुछ सूत है। उसे बेच-बाचकर, तेरेलिए कुछ खाने को ले आऊँगी।" माँ ने कहा।

"सूत बेचने से क्या मिलेगा माँ! जो मैं लालटेन लाया था, उसे ले आ। उसे बेचकर जो पैसे मिलेंगे लेता आऊँगा।" अलादीन ने कहा।

उसकी माँ ने लालटेन लाकर कहा—"बेटा, यह जरा मैली है। अगर इसको पोछकर चमका दें तो दो चार पैसे और अधिक मिल जायेंगे।"

उसने गीली रेत से लालटेन चमकानी शुरू की। उसने दो तीन बार लालटेन रगड़ी ही थी कि सामने ताड़ के बराबर एक भूत दिखाई दिया। "क्या आज्ञा है आपकी? मैं और कई और भूत इस लालटेन में रहते हैं। यह लालटेन जिसके पास होती है, हम उसकी सेवा करते हैं।"

उस भूत को देखते ही अलादीन की माँ काठ-सी हो गई। वह बेहोश होकर गिर गई।

घर में बैठे अलादीन को भूत की बातें सुनाई दीं। क्यों कि वह पहिले ही अंगूठी के भूत से बात कर चुका था, इसलिए उसने बाहर आकर देखा। माँ के हाथ से लालटेन लेकर उसने कहा—"मुझे बहुत भूख लग रही है। अच्छा भोजन लाओ।" उसने भूत को आज्ञा दी।

भूत चलागया और तुरत एक विशाल थाल ले आया। उस थाल पर तरह तरह के पकवान व पेय थे। भूत के चले जाने के बाद उसने माँ की सेवा-शुश्रुषा करके उसे जगाया।

उसने आखें खोलकर चाँदी के थाल में खाने की चीज़ें देखीं तो उसने पूछा—

"बेटा, यह सब कहाँ से आया ! क्या राजा ने हमारी मुसीबतों को देखकर हमारे लिए यह भोजन भेजा है !"

"यह सब बाद में मालूम कर लेना। पहिले अपनी भूख तो मिटालें।" अलादीन ने कहा।

उस गरीब स्त्री ने वैसा भोजन कभी न किया था। वह राजा महाराजाओं का भोजन था। उस चान्दी के थाल की कीमत भी माँ बेटा न जानते थे।

उनके पेट भर खाने के बाद भी, इतनी चीज़ें बच गईं कि वे दो बार और भोजन कर सकते थे। फिर उसकी माँ ने उससे कहा—"बेटा, अब तुम न कहोगे कि मुझे भूख लगी है, यही मेरेलिए काफ़ी है। हाँ बेटा, वह भूत क्या हुआ !"

उसके बेहोश होजाने के बाद जो कुछ गुज़रा था उसने अपने बेटे से जान लिया। उसने कहा—"यानि, मनुष्यों को भूत सचमुच दिखाई देते हैं ! मैंने कभी कोई भूत न देखा था। शायद तुझे उस गुफ़ा से यही भूत निकालकर लाया था।"

"नहीं ! माँ, जो मुझे गुफ़ा से बाहर लाया था, वह अंगूठी का भूत है।

यह लालटेन का भूत है। दोनों की शक्ल-सूरत में बहुत फर्क है।" अलादीन ने कहा।

"हमारे घर में इन भूतों का क्या काम है, बेटा ! जाओ, इस अंगूठी और लालटेन को कहीं फेंक आओ !" अलादीन की माँ ने डरते हुए कहा।

"वे हमारा उपकार कर रहे हैं न !" अलादीन ने कहा।

"हमारा उन भूतों से वास्ता रखना ही गलत है। यही नहीं, मैं उन्हें देखकर डर के मारे मर जाऊँगी !" माँ ने कहा।

"माँ, तुम कुछ सोचो तो सही, हमें फिर भूख लगेगी, तब क्या खायेंगे ? वह जादूगर मोरोको से इतनी दूर क्यों आया था जानती हो ? इस लालटेन के लिए ही। उस गुफ़ा में इतना सोना है कि कोई ठिकाना नहीं। परन्तु उसने वह न माँगा। मैंने उसे लालटेन न दी, इसलिए वह मुझे गुफ़ा में बन्द करके चला गया। इस लालटेन में बड़ा जादू है। वह जब तक हमारे पास है हमें किसी चीज़ की कमी न होगी। हमें उसे अपनी जान से भी अधिक हिफ़ाज़त से रखना होगा। किसी

को यह मालूम भी न हो कि यह हमारे पास है और अब इस अंगूठी के बारे में ! इसने मुझे एक बार मौत से बचाया है। कल मुझपर कोई और आफ़त आ सकती है, तब यह मेरी रक्षा करेगी। इसे कैसे फेंक दूँ ! यह मेरी अंगुली में ही रहेगी। अगर तुम लालटेन को देखकर डरती हो, तो मैं उसे ऐसी जगह रख दूँगा, जहाँ तुम्हें वह दिखाई न दे।" अलादीन ने कहा।

"जैसी तेरी मर्ज़ी, बेटा ! मैं भला तुझे क्यों रोकूँ ! परन्तु मैं उन भूतों को अपनी आँखों नहीं देखूँगी।" माँ ने कहा।

जो भोजन भूत लाये थे, वह अगले दिन खतम हो गया। बड़ा चान्दी का थाल और उसमें रखे बारह कटोरे बाकी रह गये। अलादीन ने एक छोटे कटोरे को ले जाकर बाज़ार में एक महाजन को दिखाया। महाजन ने अलादीन से पूछा—"इसे कितने में बेचोगे ?"

"इसकी कीमत कितनी है, क्या तुम नहीं जानते ?" अलादीन ने पूछा।

महाजन दुविधा में पड़गया। मालूम नहीं, अलादीन उसकी कीमत जानता था कि नहीं ! अगर कम बताता है तो शायद अलादीन डाँटे, डपटे, और अधिक बताता है तो उसे शायद नुक्सान होता, यह सोचते हुए उसने अपनी जेब में से एक सोने की मुहर निकाली। अलादीन ने हाथ फैलाया। मुहर लेकर वह अपने घर चला गया। महाजन को यह खेद रहा कि वह उसे, उससे कम भी देता तो वह ले लेता। अलादीन उसकी कीमत न जानता था।

अलादीन ने उस सोने की मुहर को अपनी माँ को दी। वह बाजार जाकर आवश्यक चीज़ें खरीद लाई। उस पैसे के

खर्च हो जाने के बाद एक और कटोरा ले जाकर महाजन को दिया। क्यों कि उसने पहिले एक सोने की मुहर दे रखी थी, इसलिए इस बार भी उसे सोने की मुहर देनी पड़ी।

इस प्रकार उसने बारह कटोरे बेच दिये। अब केवल चान्दी का थाल रहगया। वह बहुत भारी था। इसलिए अलादीन ने महाजन को अपने घर बुलाया। उसने उसको दस सोने मुहरें देकर उस चान्दी के थाल को खरीद लिया।

वह पैसा भी समाप्त हो गया। अलादीन ने अपनी माँ को कहीं भेजकर, लालटेन को रगड़ा। भूत प्रत्यक्ष हुआ। "भूख लग रही है। पहिले जैसा भोजन लाये थे, अब भी लाओ।" उसने भूत से कहा। भूत फिर एक बार बड़े चान्दी के थाल और बारह कटोरों में भोजन लाकर गायब हो गया।

थोड़ी देर बाद अलादीन की माँ वापिस आई। भोजन देखकर उसने सन्तोष से कहा—"इस भूत की मेहरबानी से फिर भोजन आ गया है। पर मैं इसको अपनी आखों नहीं देखूँगी।"

माँ बेटे ने, दो दिन आराम से भोजन किया। फिर अलादीन एक चान्दी का कटोरा लेकर बाजार गया।

रास्ते में एक सर्राफ़ की दुकान थी। यह सर्राफ बड़ा ईमानदार और सचा था। उसने अलादीन को देखकर कहा—"मैं देख रहा हूँ कि तुम कभी कभी कुछ ले आकर महाजन के यहाँ बेच रहे हो। बेटा, महाजन बड़े निर्दय होते हैं। मुझे क्यों नहीं बेचते?"

अलादीन ने कटोरा निकाल कर सर्राफ़ को दिखाया। सर्राफ़ ने उसे

न सर्पेता। वह और उसकी माँ सादगी की जिन्दगी बिता रहे थे।

अब अलादीन पूरी तरह बदल गया था। वह अब आलसी न था। वह रोज बाजार जाता। बड़े बड़े व्यापारियों से बात करता। व्यापार का उतार-चढ़ाव देखता, सर्राफ़ों के क्रय-विक्रय का अध्ययन करता।

उसे एक आश्चर्यजनक बात मालूम हुयी। जादूगर ने जब उसे गुफ़ा में भेजा था और जो फल उसने वहाँ के बाग में तोड़े थे, वे महज काँच के टुकड़े न थे, बल्कि अमूल्य रत्न थे। जो रत्न उसके पास थे, राजा-महाराजाओं के पास भी न होंगे। जौहरियों के कीमती रत्न उसने देखे पर जो रत्न उसके पास थे उनके सामने वे कुछ न थे।

तराजू में तोलकर कहा—"इसकी कीमत सत्तर सोने की मुहरें हैं। तुझे उस महाजन ने कितना दिया था!"

"उसने सिर्फ़ दस मुहरें दी थीं। बड़ा दुष्ट है।" यह कह कर अलादीन ने वह कटोरा सर्राफ़ को बेच दिया। वह पैसा लेकर घर चला गया।

तब से वह अपनी सारी चान्दी उस सर्राफ़ को ही बेचने लगा। धीमे धीमे उसके पास पैसा जमा होने लगा। परन्तु अलादीन ने शान शौकत से जिन्दगी बिताने की कोशिश न की। पैसा फ़ाल्तू

यह बात मालूम करने के कुछ दिनों बाद ही एक अजीब बात हुयी। जब वह जौहरियों के बाजार में जा रहा था तो उसने देखा कि राज-सैनिक उनकी दुकानें बन्द करवा रहे थे। उस मार्ग से राजकुमारी स्नानागार जा रही थी। वे घोषणा कर रहे थे कि लोग दुकानें
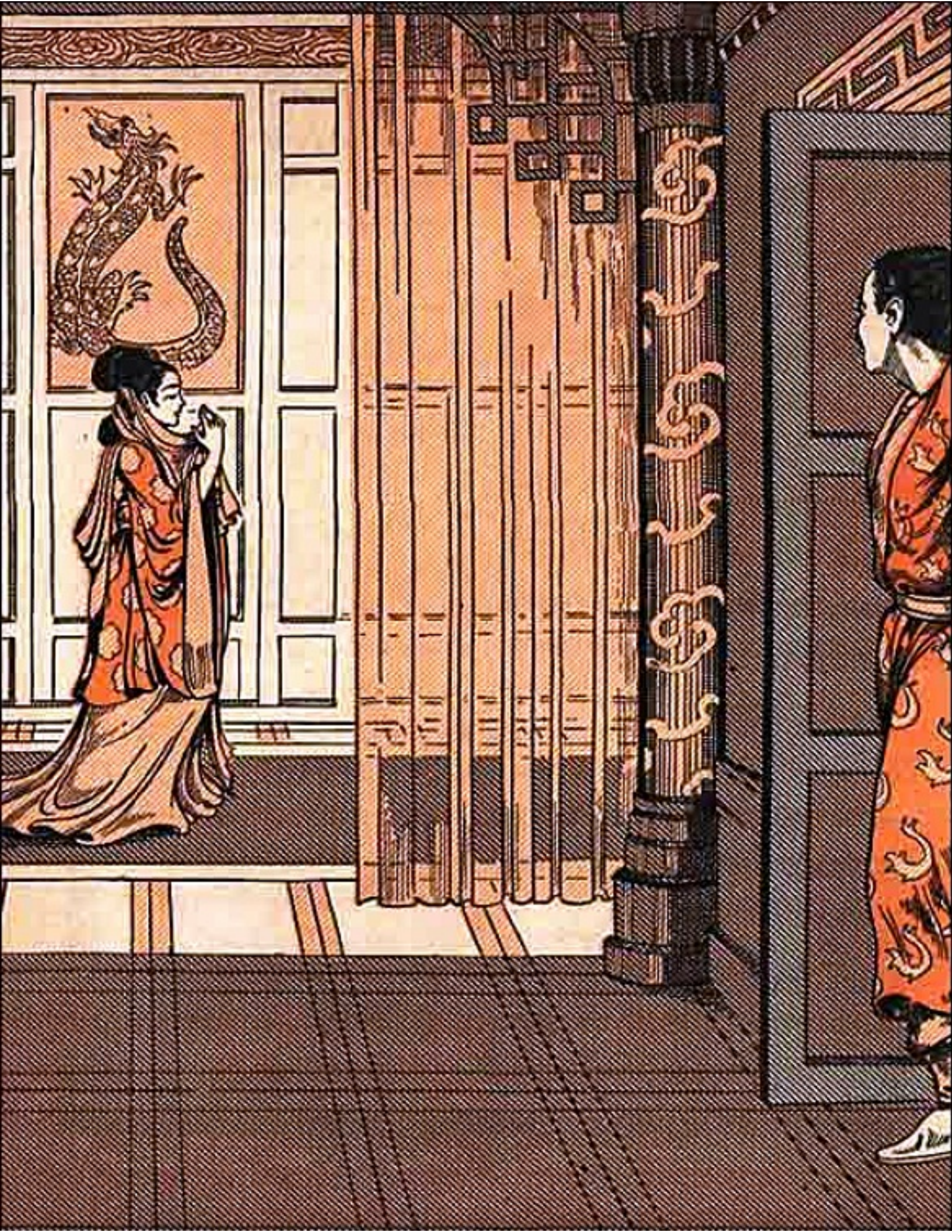
बन्द करके अपने घरों में चले जायें, जो नहीं जायेंगे, उनको मृत्यु दंड दिया जायेगा।

इस घोषणा के सुनने के बाद, अलादीन ने जैसे तैसे राजकुमारी को देखना चाहा। उसने सुन रखा था कि राजकुमारी बहुत सुन्दर थी। सबका यही ख्याल था।

उसको देखने के लिए उसने चारों और घूम कर देखा कि कहीं कोई जगह है कि नहीं। परन्तु उसे कोई जगह न दिखाई दी। अगर वह स्नानागार के दरवाजे के किवाड़ों के पीछे छुपगया तो वह राजकुमारी को देख सकेगा, यह उसे सूझा। तुरत वह स्नानागार की ओर भागा।

स्नानागार का दरवाजा बहुत बड़ा था। उसके किवाड़ के सामने अलादीन छुप गया। वह राजकुमारी के आने की प्रतीक्षा करने लगा।

इस बीच, राजकुमारी बुदूर, राजमहल से, नगर का निरीक्षण करती, सुनसान गलियों में से स्नानागार पहुँची। स्नानागार में पैर रखते ही उसने अपने मुँह का परदा ऊपर उठाया।

तब अलादीन ने राजकुमारी को देखा। उसे लगा कि उसका मुँह चन्द्रमा से भी अधिक सुन्दर था। "ओहो यह अल्लाह की महिमा है कि उसने ऐसी सुन्दरी को बनाया।" अलादीन ने सोचा।

अब तक अलादीन को सब औरतें माँ ही लगती थीं। उसने कभी न सोचा था कि उनमें सौन्दर्य भी होता है। परन्तु जब उसने बुदूर राजकुमारी को देखा तो उसका हृदय प्रेम से गदगद हो उठा,

(अभी और है)

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

फ़रवरी १९५८ :: पारितोषिक १०)

कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें ।

ऊपर के फ़ोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिये। परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों । परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिख कर निम्नलिखित पते पर ता. ७, दिसम्बर '५७ के अन्दर भेजनी चाहिये।

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता
चन्दामामा प्रकाशन
वड़पलनी :: मद्रास - २६

दिसम्बर – प्रतियोगिता – फल

दिसम्बर के फ़ोटो के लिये निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं। इनके प्रेषक को १० रु. का पुरस्कार मिलेगा।

पहिला फ़ोटो:
पहले लिख पढ़ लूँ

दूसरा फ़ोटो:
फिर मिल झूला झूलूँ

प्रेषक : मुरलीधर अग्रवाल,
C/o मदनलाल मुरलीधर, स्टेशन मंडी गंज बसौदा, (मध्य प्रदेश).

चन्दा सोया दुलारा

[चंद्र बी. ए.]

सो जाओ. सो जाओ लाल, चंदा सोया दुलारा !
मीठी कली भी डोल,
सोई सुख से सजीली ।
पलकों में निंदिया घोल,
सोई बगिया लजीली ।

अम्बर का पलना सँभाल, लाया सुन्दर सितारा !
सो जाओ, सो जाओ लाल, चंदा सोया दुलारा !
फूलों ने हिलमिल झूम,
नन्हा सपना सँजोया ।
पँखुरी को मुख से चूम,
मोती—मोहक पिरोया ।

हँसती-सी चोली झुकडाल, डोला कैसा सँवारा !
सो जाओ, सो जाओ लाल, चंदा सोया दुलारा !
परियों का पाकर प्यार,
ऊँघी कहती सहेली ।
भीनी-सी बहती बयार,
बूझो मुझसे पहेली ।

सो जाओ, सो जाओ लाल, निंदिया ने आ पुकारा !
सो जाओ, सो जाओ लाल, चंदा सोया दुलारा !

शराफत

एक दिन कहीं रास्ते में मक्खी और शहद की मक्खी मिल गईं। मक्खी को देखकर शहद की मक्खी ने नाक भौं सिकोड कर कहा "हट जा मेरे रास्ते से। अपना नापाक साया मुझ पर न पड़ने दे। देख नहीं रही है कि मैं कितनी मोहक गंध में विचरण कर के आ रही हूँ। तूने आकर सारा मजा किरकिरा कर दिया।"

"बहिन ऐसा न कहो। अपने आखिर अपने हैं। यदि में नीच हूँ तो भी हूँ तो तुम्हारी बहिन।"

"मूर्ख तेरी यह हिम्मत कि मुझे अपनी बहिन बनाती है। शर्म नहीं आती विष्टा भक्षण करने वाली और उसी में विचरण करने वाली।" शहद की मक्खी ने क्रोध से काँपते हुए कहा।

"मेरी अच्छी घमंड़ी बहिन! तू यह भूल जाती है कि मैं यथाशक्ति गन्दगी को स्वँय खाकर सफ़ाई रखने का प्रयत्न करती हूँ और तू........"

"आ हा! आप बड़ी समाज सेवक हैं। और यह हैजा कौन फैलाता है तुम या कोई और आकाश का दानव आ जाता है।"

"यह झूठा इल्जाम है। दोष तो मनुष्य का ही है कि वह स्वयँ सफ़ाई नहीं रखता और दोष देता है हम लोगों को। वर्ना मजाल क्या कि मुँह पर मक्खी भिनक जाय।"

"वाह री, पाक साफ़। दुनिया तो तुम्हें निंघ ही समझती है।...."

"दुनियाँ की क्या दुनियाँ तो तुझ जैसी को पाक साफ़ समझती है जो स्वँय मधुर फूलों को रस शोषण करे और मनुष्य को अपनी विष्टा खिलाए। और वह भी है कि बड़े आनन्द से उसे ग्रहण करता है।" यह कह कर मक्खी उठ गई।

चित्र - कथा

दास और वास पटाके बजाते बजार चले। जब पटाका बजता तो "टाइगर" उछलता कूदता। रास्ते में उन्हें एक पटाका दिखाई दिया। वे उसके पास गये ही थे कि एक बड़ा कुत्ता उसे खाने की चीज समझ, उस तरफ़ लपका आया। 'टाइगर' ने दास के हाथ से जलती सुतली नीचे गिरते देखी। तुरंत उसे ले जाकर उसने पटाके पर रखा। पटाका एकदम फूटा। तब उस बड़े, गर्वीले कुत्ते की दौड़ देखते ही बनती थी।

Printed by B. NAGI REDDI at the B. N. K. Press(Private) Ltd., and Published by him for Chandamama Publications, from Madras 26.—Controlling Editor : SRI 'CHAKRAPANI'

हम यह नहीं कहते,
हम उत्तमोत्तम हैं
पर
निम्न वस्तुओं में हम
उत्तमोत्तम
कार्य कर दिखायेंगे :
पोस्टर्स
कैलेंडर्स
कार्टून्स
लेबल्स
बुकलेट्स
फोल्डर्स
आफ़सेट प्रिंटिंग के सभी काम
उत्तम छपाई का चिह्न....

Chandamama, Dec. '57 Photo by Madangopal

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

फिर मिल झूला झूलें

प्रेषक :
मुरलीधर अग्रवाल, गंज बसौदा

रूपधर की यात्राएँ